अल-रिसाला

जनवरी–फ़रवरी 2022

अल-रिसाला
जनवरी–फ़रवरी 2022

CPS International
centre for peace & spirituality

माहनामा 'अल-रिसाला' को हिंदी स्क्रिप्ट में लाने की यह हमारी एक कोशिश है। मुश्किल उर्दू अल्फ़ाज़ को भी आसान कर दिया गया है, ताकि ज़्यादा-से-ज़्यादा लोग इसे पढ़कर फ़ायदा उठाएँ और अपनी ज़िंदगी, अपनी शख़्सियत में मुस्बत (positive) बदलाव ला सकें।

नीचे दी गई हमारी वेबसाइट और सोशल मीडिया पेजिस से मज़ीद फ़ायदा उठाएँ।

नक़ल-ए-हुरुफ़ी
सबा जबीं अब्बास

संपादकीय टीम
मोहम्मद आरिफ़, फ़रहाद अहमद
ख़ुर्रम इस्लाम क़ुरैशी, राजेश कुमार

Centre for Peace and Spirituality International
1, Nizamuddin West Market,
New Delhi-110013
info@cpsglobal.org
www.cpsglobal.org

cpsglobal.org
twitter.com/WahiduddinKhan
facebook.com/maulanawkhan
youtube.com/CPSInternational
+91-99999 44118
t.me/maulanawahiduddinkhan
linkedin.com/in/maulanawahiduddinkhan
instagram.com/maulanawahiduddinkhan

To order books of
Maulana Wahiduddin Khan, please contact
Goodword Books
Tel. 011-41827083,
Mobile: +91-8588822672
E-mail: sales@goodwordbooks.com

Goodword Bank Details
Goodword Books
State Bank of India
A/c No. 30286472791
IFSC Code: SBIN0009109
Nizamuddin West Market Branch

विषय-सूची

इंसान की तख़्लीक़	3
ख़ुदा की हुकूमत	5
निकाह ख़ैर का दरवाज़ा	7
तलाक़ का मसला	8
इंसानी इल्म, ख़ुदाई इल्म	14
थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन	15
एवोल्यूशन के दलाइल	16
फ़र्क़, न कि तब्दीली	22
एवोल्यूशन इल्म की कसौटी पर	26
थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन पर शुबहात	28
निएंडरथल मैन	29
पिल्टडाउन मैन	32
एवोल्यूशन का क़ाफ़िला	41
डार्विनिज़्म	45
एवोल्यूशन का सबूत नहीं	47
तकमील-ए-दीन की तरफ़ उम्मत का सफ़र	50
फ़र्द और समाज	56
क़यामत की तरफ़	57
पद्म विभूषण अवार्ड	62

इंसान की तख़्लीक़

इंसान की पैदाइश का मक़सद क्या है? इंसान की पैदाइश का मक़सद इंसान को फ़ितरी तरक़्क़ी का मौक़ा फ़राहम करना है। ख़ालिक़ जब ज़मीन पर एक दरख़्त उगाता है, तो वह दरख़्त को यह मौक़ा देता है कि वह ज़मीन के मवाक़े को इस्तेमाल करे, ताकि मुसलसल तौर पर उसकी तरक़्क़ी जारी रहे। अब जो दरख़्त इन मवाक़ों को इस्तेमाल करे, वह सरसब्ज़ और बड़ा दरख़्त बनेगा और जो ऐसा न करे, वह मुरझाकर फ़ौरन ख़त्म हो जाएगा। इस हक़ीक़त को क़ुरआन में इन अल्फ़ाज़ में बयान किया गया है—

أَلَمْ تَرَ كَيْفَ ضَرَبَ اللَّهُ مَثَلًا كَلِمَةً طَيِّبَةً كَشَجَرَةٍ طَيِّبَةٍ أَصْلُهَا ثَابِتٌ وَفَرْعُهَا فِي السَّمَاءِ ۔ تُؤْتِي أُكُلَهَا كُلَّ حِينٍ بِإِذْنِ رَبِّهَا وَيَضْرِبُ اللَّهُ الْأَمْثَالَ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُونَ ۔ وَمَثَلُ كَلِمَةٍ خَبِيثَةٍ كَشَجَرَةٍ خَبِيثَةٍ اجْتُثَّتْ مِنْ فَوْقِ الْأَرْضِ مَا لَهَا مِنْ قَرَارٍ

(14:24-26)

“क्या तुमने नहीं देखा कि किस तरह मिसाल बयान फ़रमाई अल्लाह ने कलिमा-ए-तय्यबा (good word) की? वह एक पाकीज़ा दरख़्त की मानिंद है, जिसकी जड़ ज़मीन में जमी हुई है और जिसकी शाख़ें आसमान तक पहुँची हुई हैं। वह हर वक़्त पर अपना फल देता है, अपने रब के हुक्म से। और अल्लाह लोगों के लिए मिसाल बयान करता है, ताकि वे नसीहत हासिल करें। और कलिमा-ए-ख़बीसा (evil word) की मिसाल एक ख़राब दरख़्त की है, जिसे ज़मीन के ऊपर ही से उखाड़ लिया जाए। उसकी जड़ मज़बूत न हो।”

दरख़्त की यह अजीब ख़ुसूसियत है कि वह पूरी कायनात से अपनी ग़िज़ा (food) हासिल करता है। वह ज़मीन से पानी और खनिज

(minerals & salts) लेता है और हवा और सूरज से अपने लिए ग़िज़ा हासिल करता है। वह नीचे से भी ख़ुराक लेता है और ऊपर से भी। इस तरह बीज से तरक़्क़ी करके एक तनावर दरख़्त की सूरत में ज़मीन के ऊपर खड़ा हो जाता है।

यही फ़ितरी क़ानून आला पैमाने पर इंसान के लिए जारी है। इस फ़र्क़ के साथ कि आम दरख़्त अगर माद्दी वजूद (material existence) है तो इंसान शऊरी वजूद (intellectual existence)। इंसान के लिए मौजूदा दुनिया में न सिर्फ़ दुनियावी तरक़्क़ी का मौक़ा है, बल्कि इससे भी बढ़कर उसके लिए ज़ेहनी तरक़्क़ी (intellectual development) का मौक़ा हासिल है। इंसान से अस्ल मतलूब यही ज़ेहनी तरक़्क़ी या ईमानी तरक़्क़ी है। संजीदा इंसान एक तरफ़ दुनिया में ख़ुदा की तख़्लीक़ात और उसके निज़ाम को देखकर इबरत और नसीहत हासिल करता है, तो दूसरी तरफ़ ऊपर से उसे मुसलसल ख़ुदा का फ़ैज़ान पहुँचता रहता है। वह मख़्लूक़ात से भी अपने लिए इज़ाफ़ा-ए-ईमान की ख़ुराक हासिल करता है और ख़ालिक़ से भी उसकी क़ुर्बत बराबर जारी रहती है।

अच्छा दरख़्त हर मौसम में अपना फल देता है। इसी तरह मोमिन हर मौक़े पर सही रवैय्या ज़ाहिर करता है, जो उसे ज़ाहिर करना चाहिए। मुआशी तंगी हो या मुआशी फ़राख़ी, ख़ुशी का लम्हा हो या ग़म का। शिकायत की बात हो या तारीफ़ की। ज़ोर-आवरी की हालत हो या बे-ज़ोरी की। हर मौक़े पर एक मोमिन की ज़बान और उसका किरदार वही रद्द-ए-अमल (response) ज़ाहिर करता है, जो ख़ुदा के सच्चे बंदे की हैसियत से उसे ज़ाहिर करना चाहिए।

अहल-ए-ईमान की इस ख़ुसूसियत को एक हदीस-ए-रसूल में इन अल्फ़ाज़ में बयान किया गया है—

عَجَبًا لِأَمْرِ الْمُؤْمِنِ، إِنَّ أَمْرَهُ كُلَّهُ خَيْرٌ، وَلَيْسَ ذَاكَ لِأَحَدٍ إِلَّا لِلْمُؤْمِنِ، إِنْ أَصَابَتْهُ سَرَّاءُ شَكَرَ، فَكَانَ خَيْرًا لَهُ، وَإِنْ أَصَابَتْهُ ضَرَّاءُ، صَبَرَ فَكَانَ خَيْرًا لَه

"मोमिन का मामला अजीब है। उसके लिए उसके हर मामले में भलाई है और यह मोमिन के सिवा किसी और के लिए नहीं। अगर उसे कोई ख़ुशी मिलती है और वह शुक्र करता है, तो वह उसके लिए भलाई बन जाती है और अगर उसे कोई तकलीफ़ पहुँचती है और वह सब्र करता है, तो वह उसके लिए भलाई बन जाती है।"

(सहीह मुस्लिम, हदीस नं० 2999)

इस हदीस में मोमिन से मुराद मुस्लिम घर में पैदा होने वाला इंसान नहीं है, बल्कि इससे मुराद वह इंसान है, जिसे ईमान दरयाफ़्त की सतह पर हासिल हुआ हो, जो तदब्बुर (contemplation) और तफ़क्कुर (reflection) की सिफ़त का हामिल हो। ऐसा इंसान हर चीज़ से अपने लिए मारिफ़त की ग़िज़ा हासिल करता है। वह चीज़ों को ख़ुदाई तख़्लीक़ के ऐतबार से देखता है।

इस रब्बानी तर्ज़-ए-फ़िक्र का यह नतीजा होता है कि वह सख़्ती में आसानी को दरयाफ़्त कर लेता है। कायनात के हर मुशाहदे (observation) में वह अल्लाह का जलवा देखता है। ज़िंदगी का हर ख़ुशगवार तजुर्बा उसे अल्लाह की रहमत की याद दिलाता है और ज़िंदगी का हर तल्ख़ तजुर्बा उसके लिए तक़्वे का सबब बनता है। नाकामी भी उसे ख़ुदा की याद दिलाती है और कामयाबी भी उसे ख़ुदा से क़रीब करती है।

ख़ुदा की हुकूमत

कुछ लोग कहते हैं कि मुसलमानों का मिशन यह है कि वे दुनिया में ख़ुदा की हुकूमत क़ायम करें, मगर यह ख़ुदा के मंसूबा-ए-तख़्लीक़ से बे-ख़बरी का ऐलान है। हक़ीक़त यह है कि इस कायनात में हर

लम्हा ख़ुदा की हुकूमत कामिल तौर पर क़ायम है और मोमिन वह है, जो ख़ुदा की इस क़ायम-शुदा हुकूमत का एतिराफ़ करके उसके आगे इख़्तियाराना तौर पर सरेंडर कर दे। वह अपने आपको ख़ुदा की इस क़ायम-शुदा हुकूमत का फ़र्मां-बरदार शहरी बना ले। इसी इख़्तियारी इताअत का दूसरा नाम ईमान है।

क़ुरआन में इरशाद हुआ है—

أَفَغَيْرَ دِينِ اللَّهِ يَبْغُونَ وَلَهُ أَسْلَمَ مَنْ فِي السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ طَوْعًا وَكَرْهًا وَإِلَيْهِ يُرْجَعُونَ

"क्या ये लोग अल्लाह के दीन के सिवा कोई और दीन चाहते हैं? हालाँकि उसी के हुक्म में है, जो कोई आसमान और ज़मीन में है, ख़ुशी से या ना-ख़ुशी से और सब उसी की तरफ़ लौटाए जाएँगे।" (3:83)

इसका मतलब यह है कि अल्लाह ने अपना दीन सारी कायनात में जबरन क़ायम कर रखा है। इंसान को यही दीन अपने ज़ाती फ़ैसले के तहत इख़्तियार करना है। इस इख़्तियार का ताल्लुक़ अस्लन फ़र्द से है, न कि मख़्सूस निज़ाम के क़ियाम से। अगर मान लें कि किसी इंसानी निज़ाम के ऊपर अल्लाह का दीन जबरन ताक़त के ज़रिये नाफ़िज़ कर दिया जाए, तब भी अल्लाह का मतलूब पूरा नहीं होगा, क्योंकि अल्लाह के मंसूबे के मुताबिक़ जो चीज़ मतलूब है, वह यह कि हर फ़र्द अपने आज़ादाना इख़्तियार के तहत अल्लाह का हुक्म मानने वाला बन जाए।

क़ुरआन में मुख़्तलिफ़ अंदाज़ से यह बात कही गई है कि अल्लाह ने अपने पैग़ंबर के ज़रिये हक़ और बातिल को वाज़ेह तौर पर बयान कर दिया है। अब जो शख़्स चाहे उसका मोमिन बने और जो शख़्स चाहे उसका इनकार कर दे। (अल-कहफ़, 18:29)

इससे मालूम हुआ कि अल्लाह यह चाहता है कि वह लोगों को अपने मंसूबा-ए-तख़्लीक़ से आगाह करे, फिर देखे कि कौन शख़्स

अपनी आज़ादी के साथ इख़्तियाराना तौर पर इताअत का सबूत देकर इनाम का मुस्तहिक़ बनता है और कौन शख़्स आज़ादाना नाफ़रमानी में मुब्तला होकर अब्दी नकामी से दो-चार होता है।

ख़ुदा की इताअत का जबरन नाफ़िज़ किया जाने वाला निज़ाम ख़ुदा के तख़्लीक़ी मंसूबे के ख़िलाफ़ है, इसलिए वह ख़ुदा का मतलूब अमल नहीं और यही वजह है कि इस तरह जबरन इताअत का निज़ाम पूरी इंसानी तारीख़ में कभी इस दुनिया में क़ायम नहीं हुआ और इसकी वजह यह थी कि वह ख़ुदा का मतलूब ही न था।

निकाह ख़ैर का दरवाज़ा

एक हदीस-ए-रसूल इन अल्फ़ाज़ में आई है—

عَنْ عَائِشَةَ، قَالَتْ قَالَ رَسُولُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ خَيْرُكُمْ خَيْرُكُمْ لِأَهْلِهِ وَأَنَا خَيْرُكُمْ لِأَهْلِي

“आइशा रिवायत करती हैं कि आपने कहा— ‘तुममें सबसे अच्छा वह है, जो अपने घरवालों के लिए अच्छा हो और मैं अपने घरवालों के लिए सबसे अच्छा हूँ।’ ”

(जामे अल-तिर्मिज़ी, हदीस नं० 3895)

अस्ल यह है कि एक मर्द व औरत जब निकाह के ताल्लुक़ में इकट्ठा होते हैं तो यह उनके लिए ज़िंदगी का भरपूर तजुर्बा होता है। इस ताल्लुक़ के ज़रिये उन्हें हर सुब्ह-ओ-शाम तरह-तरह के तजुर्बे पेश आते हैं। कभी अच्छे और कभी ब-ज़ाहिर बुरे। उन्हें कभी ख़ुशगवार तजुर्बा पेश आता है और कभी नाख़ुशगवार तजुर्बा। किसी मामले में उनके अंदर नफ़रत के जज़्बात भड़कते हैं और कभी मुहब्बत के जज़्बात। कभी वे ख़ुशी से दो-चार होते हैं और कभी

ना-ख़ुशी से। कभी उनकी अना को तस्कीन मिलती है और कभी उनकी अना पर चोट लगती है। कभी वे एतिराफ़ की सूरत-ए-हाल में होते हैं और कभी बे-एतिराफ़ी की सूरत-ए-हाल में। कभी हुक़ूक़ की अदायगी का मौक़ा होता है और कभी हुक़ूक़ के इनकार का वग़ैरह-वग़ैरह।

घर के अंदर पेश आने वाली ये मुख़्तलिफ़ हालतें हर औरत और हर मर्द के लिए अपनी तैयारी के मवाक़े हैं, क्योंकि मौजूदा दुनिया की ज़िंदगी इम्तिहान की ज़िंदगी है। एक तरह की ज़िंदगी इंसान को जन्नत की तरफ़ ले जाती है और दूसरी तरह की ज़िंदगी उसे जहन्नम का मुस्तहिक़ बना देती है। ज़िंदगी की इस इम्तिहानी नौइय्यत का ताल्लुक़ घर के अंदर के मामलात से भी है और घर के बाहर के मामलात से भी।

इंसान को चाहिए कि वह इन तजुर्बात को सबक़ के ख़ाने में डाले। इन तजुर्बात के ज़रिये वह हमेशा ख़ैर का पहलू तलाश करे। इन तजुर्बात को वह हमेशा वसी-तर मआनों में ले। एक घरेलू तजुर्बे को वसी-तर मआनों में ज़िंदगी के तजुर्बे के तौर पर देखे। वह हर तजुर्बे में ख़ैर का पहलू तलाश करे। अगर वह ऐसा करे तो निकाह का तजुर्बा उसके लिए पूरी ज़िंदगी की इस्लाह का तजुर्बा बन जाएगा।

तलाक़ का मसला

तलाक़ क्या है? तलाक़ का मतलब यह है कि एक बा-इख़्तियार इदारे की तरफ़ से निकाह के रिश्ते को ख़त्म करना।

The legal dissolution of a marriage by a court or other competent body.

निकाह सिर्फ़ एक मर्द और एक औरत का मामला नहीं है, बल्कि निकाह क़ानून-ए-फ़ितरत का मामला है। एक मर्द और एक औरत जब

निकाह के ज़रिये आपस में रिश्ता क़ायम करते हैं, तो वे फ़ितरत के एक क़ानून को अपने ऊपर लागू करते हैं। फ़ितरत के जो क़वानीन हैं, वे सब-के-सब बिला-इस्तिसना (without exception) ज़िंदगी के अटल उसूल पर क़ायम हैं। निकाह का मतलब यह है कि एक औरत और एक मर्द बाहमी तौर पर एक-दूसरे के पार्टनर बनें और कॉगव्हील (cogwheel) की मानिंद एक-दूसरे से तआवुन करते हुए ख़ालिक़ के नक़्शा-ए-तख़्लीक़ (creation plan) की तकमील करें।

इस ऐतबार से तलाक़ ख़ालिक़ के नक़्शा-ए-तख़्लीक़ का हिस्सा नहीं। वह इंसान के ग़लत इस्तेमाल-ए-आज़ादी का हिस्सा है। तलाक़ किसी इंसान के लिए एक जज़्बाती घटना है। वह इंसान की हक़ीक़ी ज़रूरत का हिस्सा नहीं। यही वजह है कि तलाक़ का एक टाइम बाउंड तरीक़ा मुक़र्रर किया गया है, जो तीन महीने के प्रोसेस में मुकम्मल होता है। जज़्बाती इरादा हमेशा वक़्ती होता है। इसलिए तलाक़ का एक लंबा प्रोसेस बना दिया गया है, ताकि आदमी अपने इरादे पर नए सिरे से ग़ौर करे और जज़्बाती फ़ैसले के बजाय सोचे-समझे फ़ैसले को इख़्तियार करे। यह एक हक़ीक़त है कि तलाक़ का इरादा एक जज़्बाती इरादा है। आदमी को अगर सोचने का वक़्फ़ा दिया जाए तो ज़्यादा इम्कान यही है कि वह अपनी राय पर नज़र-ए-सानी करेगा और निकाह को बरक़रार रखने का फ़ैसला करेगा।

मैं ज़ाती तौर पर ऐसे वाक़िआत को जानाता हूँ, जबकि एक इंसान ने निकाह के बाद जज़्बाती तौर पर तलाक़ का इरादा किया, लेकिन ऐसे अस्बाब पेश आए कि वह फ़ौरी तौर पर तलाक़ न दे सका, बल्कि अपने इरादे पर जान-बूझकर या हालात के दबाव के तहत दोबारा से ग़ौर किया। इसके बाद उसका इरादा बदला और उसने अपनी बीवी के साथ ज़िंदगी गुज़ारने का फ़ैसला किया। इसका नतीजा हैरत-अंगेज़ था। वह यह कि मर्द ने औरत की ख़ुसूसियात को दोबारा दरयाफ़्त

किया और फिर उन ख़ुसूसियात को इस्तेमाल किया। इसके बाद दोनों 'कॉगव्हील' (cogwheel) की तरह मिलकर काम करने लगे और उन्होंने ग़ैर-मुतवक़्क़ा तौर पर बड़ी कामयाबी हासिल की।

अस्ल यह है कि लोग आम तौर पर शादीशुदा औरत को अपने लिए सिर्फ़ होम पार्टनर (home partner) समझते हैं। हालाँकि फ़ितरत के क़ानून के मुताबिक़, औरत और मर्द दोनों एक-दूसरे के लिए लाइफ़ पार्टनर्स हैं। दोनों एक-दूसरे के लिए फ़ितरत की तरफ़ से दिए हुए इंटेलेक्चुअल पार्टनर की हैसियत रखते हैं। दोनों एक-दूसरे के बग़ैर अधूरे हैं और दोनों मिलकर एक-दूसरे के पूरक (counterpart) बन जाते हैं।

यही वजह है कि एक तरफ़ क़ुरआन में तलाक़ का एक मुक़र्रर तरीक़ा इन अल्फ़ाज़ में बताया गया है—

الطَّلَاقُ مَرَّتَانِ فَإِمْسَاكٌ بِمَعْرُوفٍ أَوْ تَسْرِيحٌ بِإِحْسَانٍ

"तलाक़ दो बार है, फिर या तो क़ायदे के मुताबिक़ रख लेना है या ख़ुश-उस्लूबी के साथ रुख़्सत कर देना।" (2:229)

दूसरी तरफ़ हदीस में तलाक़ के बारे में ये अल्फ़ाज़ आए हैं—

أبغض الحلال إلى الله الطلاق

"ख़ालिक़ के नज़दीक तलाक़ इंतिहाई हद तक एक ग़ैर-मतलूब चीज़ है।" (सुनन इब्ने-माजा, हदीस नं० 2018)

लेकिन अगर कोई शख़्स तलाक़ पर इसरार करे तो उसे चाहिए कि वह मुक़र्रर तरीक़े के मुताबिक़ उन तीन महीनों तक जज़्बात से काम लेने के बजाय ख़ूब सोचे और फिर तीसरे महीने में इद्दत के ख़त्म होने पर तलाक़ को मुकम्मल करे। ऐसा इंसान को यह मौक़ा देने के लिए किया गया कि वह आख़िरी हद तक सोचे और तलाक़ सिर्फ़ उस वक़्त दे, जबकि तलाक़ उसके लिए सोचे-समझे फ़ैसले के तहत एक लाज़मी

ज़रूरत बन जाए। फ़ितरत के मुताबिक़, न कि ख़्वाहिश के मुताबिक़, बल्कि उसके लिए कोई दूसरा ऑप्शन सिरे से मौजूद ही न हो।

मौजूदा ज़माने में तलाक़ को लेकर एक नया मसला पैदा हो गया है। वह है तीन तलाक़ का मसला। तीन तलाक़ का तरीक़ा बिदअत का तरीक़ा है, जो बाद के ज़माने में पैदा हुआ। इब्तिदाई दौर का मुस्लिम समाज इस नए नापसंदीदा तरीक़े से पाक था। तीन तलाक़ का मसला कैसे पैदा हुआ? इस मामले में अब्दुल्लाह इब्न-ए-अब्बास की एक रिवायत है, जिसके अल्फ़ाज़ ये हैं—

كان الطلاق على عهد رسول الله صلى الله عليه وسلم، وأبي بكر، وسنتين من خلافة عمر، طلاق الثلاث واحدة، فقال عمر بن الخطاب إن الناس قد استعجلوا في أمر قد كانت لهم فيه أناة، فلو أمضيناه عليهم، فأمضاه عليهم

(सहीह मुस्लिम, हदीस नं० 1472)

इस मामले में दूसरी रिवायत में ये अल्फ़ाज़ हैं—

وكان عمر إذا أتي برجل طلق امرأته ثلاثا أوجع ظهره

(सुनन सईद बिन मंसूर, हदीस नं० 1073)

"अब्दुल्लाह इब्न-ए-अब्बास कहते हैं कि तलाक़ का मामला रसूलुल्लाह के अहद में और अबू बक्र के ज़माने में और उमर के इब्तिदाई दो सालों में यह था कि तीन तलाक़ एक थी। उमर बिन अल-ख़त्ताब ने कहा कि लोग इस मामले में जल्दबाज़ी से काम ले रहे हैं, जिसमें उनके लिए जल्दबाज़ी नहीं थी, तो मैं चाहता हूँ कि लोगों के लिए एक हुक्म जारी कर दूँ। चुनाँचे उन्होंने हुक्म जारी किया। दूसरी रिवायत के मुताबिक़, इस हुक्म का एक जुज़ यह भी था कि उमर के पास जब ऐसा आदमी लाया जाता, जिसने अपनी औरत को एक ही बार में तीन तलाक़ दी हो तो उमर उसकी पीठ पर कोड़े मारते थे।"

ख़लीफ़ा-ए-सानी उमर फ़ारूक़ ने एक मजलिस की तीन तलाक़ों को तीन मानने का जो अमल किया, उसकी हैसियत हुक्म-ए-हाकिम (executive order) की थी। उसकी हैसियत शरीअत में किसी तब्दीली की न थी। यह एक हक़ीक़त है कि हुक्म-ए-हाकिम हमेशा वक़्ती होता है। वह महदूद ज़माने के लिए होता है, न कि अल्लाह के हुक्म की तरह क़यामत तक के लिए एक अबदी हुक्म, लेकिन बाद के उलमा ने हाकिम के इज्तिहादी हुक्म को अमलन अम्र-ए-शरई का दर्जा दे दिया। वे ख़लीफ़ा उमर के इसी अमल पर फ़तवा देने लगे, जबकि ख़लीफ़ा उमर की हरगिज़ यह मंशा न थी। बाद के उलमा को यह हक़ न था कि वे ख़लीफ़ा के हुक्म को शरई हुक्म की तरह आम हुक्म कर दें। इसीलिए उमर फ़ारूक़ के हुक्म को आम करने के बावजूद उनके लिए यह मुमकिन न हुआ कि वे ख़ताकार की पीठ पर कोड़े मारें और उसके बाद तीन तलाक़ को शरई तौर पर वाक़े करने का फ़तवा दें, क्योंकि तमाम उलमा का इत्तिफ़ाक़ है कि कोड़े मारने का हक़ सिर्फ़ हाकिम को है, किसी और को हरगिज़ नहीं। जब उलमा के लिए यह मुमकिन न था कि वे ख़ताकार को कोड़े मारें तो उन्हें यह भी हक़ नहीं था कि वे ख़लीफ़ा के हुक्म को आम करें और आम करके तीन तलाक़ को वाक़े करने का तरीक़ा इख़्तियार करें। बाद के उलमा का यही वह इज्तिहादी तरीक़ा है, जिससे तीन तलाक़ का मौजूदा मसला पैदा हुआ।

मारूफ़ आलिम इब्न-ए-तैमिया (661-728 हि०) ने उलमा की इस ग़लती को जाना और उन्होंने इसके ख़िलाफ़ फ़तवा दिया। उन्होंने कहा—

إن طلقها ثلاثا في طهر واحد بكلمة واحدة أو كلمات أنه محرم ولا يلزم منه إلا طلقة واحدة ... فإن كل طلاق شرعه الله في القرآن في المدخول بها إنما هو الطلاق الرجعي؛ لم يشرع الله لأحد أن يطلق الثلاث جميعا

“अगर किसी ने एक बार में तीन तलाक़ दी, एक ही कलिमा में या एक से ज़्यादा कलिमात में, तो यह हराम है और इससे सिर्फ़ एक

तलाक़ लाज़िम आती है। तलाक़-ए-रजई को अल्लाह ने क़ुरआन में उस औरत के लिए जारी किया है, जिसका अपने शौहर से जिस्मानी रिश्ता क़ायम हो गया हो। अल्लाह ने किसी के लिए एक साथ तीन तलाक़ को जारी नहीं किया।" (मज्मूआ अल-फ़तावा, 33/8-9)

मगर इब्न-ए-तैमिया के बाद सलफ़ी उलमा के सिवा दूसरे उलमा ने इब्न-ए-तैमिया के इस फ़तवे को अमलन तस्लीम नहीं किया। वे ब-दस्तूर अपनी साबिक़ रविश पर क़ायम रहे। इस मामले में बाद के उलमा की रविश एक ग़लतफ़हमी पर क़ायम थी। इन्होंने ग़लत तौर पर क़दीम उलमा की रविश को उम्मत की आम सहमति (इज्मा) का मसला बना लिया। हालाँकि हरगिज़ वह उम्मत की आम सहमति का मसला न था। यह बिला शुबह एक ग़लतफ़हमी का मामला था। ख़लीफ़ा उमर फ़ारूक़ के बाद आने वाले उलमा ने यह ग़लती की कि उन्होंने हुक्म-ए-हाकिम (executive order) को अम्र-ए-शरई का दर्जा दे दिया। मज़ीद ग़लती यह हुई कि ग़लतफ़हमी पर मबनी उलमा के इस अमल को उम्मत की आम सहमति का दर्जा दे दिया गया। अपनी हक़ीक़त के ऐतबार से यह एक ग़लती पर दूसरी ग़लती का इज़ाफ़ा था यानी पहले मरहले में हुक्म-ए-हाकिम को अम्र-ए-शरई का दर्जा देना और फिर ग़लतफ़हमी पर मबनी उलमा के इस अमल को इज्मा-ए-उम्मत समझ लेना।

अब सवाल यह है कि इस मामले में सही मसला क्या है? सही मसला यह है कि इस मामले में माज़ी की ग़लती को दुरुस्त किया जाए और वह यह है कि ख़लीफ़ा के अमल को हुक्म-ए-हाकिम का दर्जा दिया जाए, न कि हुक्म-ए-शरीअत का दर्जा। दूसरी बात यह है कि बाद के उलमा ने जब ख़लीफ़ा उमर के अमल की बुनियाद पर फ़तवा देना शुरू कर दिया तो यह फ़तवा नाक़िस फ़तवा की हैसियत रखता था, क्योंकि इन उलमा ने तलाक़-ए-सलासा (एक ही वक़्त में दी गई तलाक़) को वाक़े करने का फ़तवा तो दिया, जबकि इसके लाज़िमी जुज़ यानी कोड़ा मारने को छोड़ दिया। इस तरह इस तरीक़े की कोई

बुनियाद न थी। यह मस्लक न तो इब्तिदाई दौर पर क़ायम था और न ख़लीफ़ा उमर के तरीक़े पर। यह तरीक़ा न तो दौर-ए-अव्वल के अमल पर क़ायम था और न ख़लीफ़ा उमर के हुक्म-ए-हाकिम के अमल पर। अब ज़रूरत है कि इमाम इब्न-ए-तैमिया के फ़तवे को इस मामले में दूसरे उलमा भी दुरुस्त मस्लक के तौर पर इख़्तियार कर लें, जिस तरह सलफ़ी उलमा ने इसे इख़्तियार कर लिया है यानी तलाक़-ए-सलासा को ग़ुस्से में दी गई तलाक़ मानना और इसे एक तलाक़ का दर्जा देना।

इंसानी इल्म, ख़ुदाई इल्म

लॉश नेश (Loch Ness) स्कॉटलैंड की एक बड़ी झील है। 1975 में एक अमरीकी क़ानून-दाँ ने ज़मीन-दोज़ कैमरे के ज़रिये इस झील के अंदरूनी फ़ोटो लिये। इन फ़ोटो में झील के अंदर के कुछ मंज़र दिखाई देते थे। ये मंज़र बादल के धब्बों की शक्ल में थे। इन तस्वीरी धब्बों का मुताला शुरू किया गया, यहाँ तक कि इन धब्बों को यह समझ लिया गया कि ये ज़िंदा जानवरों की तस्वीरें हैं। कहा गया कि स्कॉटलैंड की इस झील के अंदर इंतिहाई क़दीम ज़माने के बाज़ बहुत बड़े-बड़े जानवर मौजूद हैं, जो 'थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन[1]—Theory of Evolution'

[1] **थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन**— इसका ख़ुलासा यह है कि बहुत पहले ज़िंदगी एक सादा ज़िंदगी (simple life forms) से शुरू हुई। फिर नस्ल-दर-नस्ल वह बढ़ती रही। हालात के असर से इसमें मुसलसल म्यूटेशन यानी जेनेटिक तब्दीलियाँ होती रहीं। म्यूटेशन लंबे दौर तक मुसलसल होता रहा । इस तरह एक इब्तिदाई प्रजाति मुख़्तलिफ़ प्रजातियों में तब्दील होती चली गई। इस लंबे अमल के दौरान एक फ़ितरी क़ानून उसकी रहनुमाई करता रहा। यह फ़ितरी क़ानून डार्विन के अल्फ़ाज़ में नेचुरल सिलेक्शन था। इस तरह ज़िंदगी का सफ़र एक जरासीम से शुरू हुआ और नस्ल-दर-नस्ल लंबी मुद्दत में मछली, चिड़िया, बंदर और आखिर में इंसान तक पहुँचा।

के मुताबिक़ क़दीम ज़माने में काफ़ी तादाद में ज़मीन पर पाए जाते थे। इस क़ियास पर माहिरीन को इतना यक़ीन था कि इसका एक ख़याली नाम 'प्लेसीओसॉर' (Plesiosaurs) रख दिया गया, मगर बाद में मालूम हुआ कि यह ख़याल बिल्कुल ग़लत था। ये धब्बे चट्टानों के थे, न कि ज़िंदा जानवरों के।

इंसानी इल्म में हमेशा इस क़िस्म की ग़लतियाँ ज़ाहिर होती रही हैं— पहले भी और आज भी, मगर क़ुरआन में आज तक इस क़िस्म की किसी ग़लती का इनकिशाफ़ न हो सका। हालाँकि क़ुरआन हर क़िस्म के मौज़ूआत का ज़िक्र करता है। यही एक वाक़िआ यह साबित करने के लिए काफ़ी है कि क़ुरआन ख़ुदा का कलाम है, वह कोई इंसानी कलाम नहीं। अगर वह इंसानी कलाम होता तो यक़ीनन उसके अंदर भी वही कमियाँ पाई जातीं, जो तमाम इंसानों के कलाम में बिला-इस्तिसना पाई जाती रही हैं। (डायरी 1985)

थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन

'ऑर्गेनिक एवोल्यूशन' (Organic Evolution) जदीद दुनिया के लिए एक साइंटिफिक हक़ीक़त है। 'साइंस ऑफ़ लाइफ़' के माहिरीन ने लिखा है कि ऑर्गेनिक एवोल्यूशन के हक़ीक़त होने से अब किसी को इनकार नहीं है, सिवा उन लोगों के जो जाहिल हों या तास्सुब रखने वालें हों या अंधविश्वासी हों। इस नज़रिये की मक़बूलियत का अंदाज़ा इससे कीजिए कि आर. एस. लल की सात सौ सफ़्हे की किताब में ज़िंदगी के तख़्लीक़ी तसव्वुर (special creation) पर सिर्फ़ एक सफ़्हा और चंद सतरें हैं और बक़िया तमाम सफ़्हात ऑर्गेनिक एवोल्यूशन के बारे में हैं। लल ने लिखा है—

"डार्विन के बाद से थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन दिन-ब-दिन ज़्यादा क़ुबूलियत हासिल करती रही है, यहाँ तक कि अब सोचने और जानने वाले लोगों में इस बारे में कोई शुबह नहीं रह गया है कि यह वाहिद मंतिक़ी (logical) तरीक़ा है, जिसके तहत अमल-ए-तख़्लीक़ को समझा जा सकता।" (Organic Evolution, p.15)

मॉडर्न पॉकेट लाइब्रेरी (न्यूयॉर्क) ने 'मैंन एंड द यूनिवर्स'(Man and the Universe) के नाम से किताबों का एक सिलसिला शाए किया है। इस सिलसिले की पाँचवीं किताब में डार्विन की किताब 'द ऑरिजिन ऑफ़ स्पीशीज़'(The origin of the Species) को तारीख़ी (Historical) किताब क़रार दिया गया है। इसी तरह एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका (1958) में तख़्लीक़ (creationism) के नज़रिये को चौथाई सफ़्हात से भी कम जगह दी गई है।

इसके मुक़ाबले में 'ऑर्गेनिक एवोल्यूशन' के टाइटल के तहत जो आर्टिकल शामिल किया गया है, वह बारीक टाइप के पूरे चौदह सफ़्हात तक फैला हुआ है। इस मक़ाले में भी हैवानात में एवोल्यूशन को बतौर एक हक़ीक़त तस्लीम किया गया है और कहा गया है कि डार्विन के बाद इस नज़रिये को साइंस-दानों और तालीमयाफ़्ता तबक़े में क़ुबूल-ए-आम हो चुका है। मौजूदा ज़माने के अहल-ए-इल्म ने इसकी सच्चाई तस्लीम कर ली है।

एवोल्यूशन के दलाइल

मौजूदा ज़माने के 'लाइफ़ साइंस' (Life Sciences) के माहिरीन आम तौर पर थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन को तस्लीम कर चुके हैं। उनका कहना है कि एवोल्यूशन महज़ एक नज़रिया नहीं, वह एक मानी हुई साइंसी हक़ीक़त है, मगर जहाँ तक दलील का ताल्लुक़ है, तो यह दावे

से अभी तक साबित नहीं किया जा सका। थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन के हक़ में तीन क़िस्म की दलीलें दी जाती हैं।

(1) माँ के पेट में इंसान का हमल (embryo) मछली, छिपकली, सूअर और बंदर के जैसी सूरतों से गुज़रकर इंसान की सूरत तक पहुँचता है। एवोल्यूशन के माहिरीन के नज़दीक यह मुशाहदा [2] इस बात का सबूत है कि इंसान अपनी तारीख़ के पिछले दौर में उन्हीं जानवरों जैसा था। उनके नुक़्ता-ए-नज़र के मुताबिक़ माँ का पेट नौ महीनों में इंसान की इस लंबी तारीख़ को दोहराता है, जो पेट के बाहर अरबों साल के अंदर ज़ुहूर में आई थी।

(2) जानवरों और इंसान के ढाँचे में एक एवोल्यूशनरी समानता पाई जाती है। मछली से लेकर इंसान तक जानवरों की जो मुख़्तलिफ़ क़िस्में हैं, उनकी हड्डियों के ढाँचे का तक़ाबुली मुताला (comparative study) किया जाए तो मालूम होगा कि उनमें बुनियादी समानताओं के साथ एक एवोल्यूशनरी ताल्लुक़ है। ऊपर की सतह के जानवर निचली सतह के जानवर की एवोल्यूशनरी सूरतें मालूम होती हैं। यहाँ तक कि इंसान तक पहुँचकर यह एवोल्यूशन का अमल अपनी कामिल सूरत इख़्तियार कर लेता है।

(3) चट्टानों की तहों में क़दीम जानदारों की हड्डियाँ फ़ॉसिल्स [3] की हालत में पाई गई हैं। चट्टानों का मुताला बताता है कि उनकी तहें

---

[2] **मुशाहदा (Observation)** — किसी चीज़ के बारे में अपने तमाम होश-ओ-हवास (senses) के ज़रिये मालूमात हासिल करना। साइंस में, मुशाहिदे में साइंसी आलात के इस्तेमाल के ज़रिये डेटा इकट्ठा करना और रिकॉर्डिंग भी शामिल हो सकती हैं।

[3] **फ़ॉसिल** — लाखों-करोड़ों साल पहले के ज़िंदा रहने वाली किसी चीज़ के महफ़ूज़ बक़िया हिस्से, निशानियाँ या उनके सुराग़ को फ़ॉसिल कहतें हैं, जैसे— हड्डियाँ, ख़ौल, ढाँचे, जानवरों के पत्थर पर निशान।

एक के बाद एक मुख़्तलिफ़ ज़मानों में बनी हैं। इस तरह ये चट्टानी तहें गोया किताब-ए-फ़ितरत के पन्ने हैं, जो हमें गुज़रे ज़माने की दास्तान बताते हैं। चट्टानों की मुख़्तलिफ़ तहों में फ़ॉसिल्स हड्डियों के मुताले से दरयाफ़्त हुआ है कि ज़मीन के ऊपर जानदारों की जो क़िस्में पाई जाती हैं, वह सबकी सब अव्वल रोज़ से मौजूद न थीं, बल्कि उनके ज़ुहूर में एक एवोल्यूशनरी तर्तीब है। क़दीमतरीन तहों में मछली की क़िस्म के जानवरों के फ़ॉसिल्स मिलते हैं, फिर छिपकली की क़िस्म के जानवर, फिर दूध पिलाने वाले जानवर, फिर बंदर और आख़िर में इंसान।

जवाब

यह वे दलाइल हैं जिन पर एवोल्यूशन की बुनियाद क़ायम की गई है। यह बात बज़ात-ए-ख़ुद हक़ीक़त हो सकती है, मगर ख़ालिस इल्मी ऐतबार से देखा जाए तो उनका कोई भी ताल्लुक़ एवोल्यूशन के नज़रिये से नहीं है। उनके ज़रिये इस नज़रिये के हक़ में दलील क़ायम नहीं होती।

(1) यह बात बज़ात-ए-ख़ुद एक हक़ीक़त है कि इंसान के बच्चे का मुशाहदा जब माँ के पेट में किया जाता है तो इब्तिदाई दिनों में इसके और जानवर के बच्चे में बहुत कम ज़ाहिरी फ़र्क़ होता है। ब-ज़ाहिर ऐसा मालूम होता है कि वह मछली और चौपाए की शक्लों से गुज़रकर इंसान की सूरत इख़्तियार कर रहा है, मगर सिर्फ़ इस मुशाहदे से यह साबित नहीं होता कि क़ुदरत पाँच सौ मिलियन साल के अमल को नौ महीनों में दोहराती है। जिस क़ुदरत को इससे पहले एक इंसान बनाने में पाँच सौ मिलियन साल लग गए, वह अब सिर्फ़ नौ महीनों में करोड़ों इंसान किस तरह बना रही है? और अगर क़ुदरत के अमल को मुख़्तसर करना मुमकिन है तो एक बॉटनी के माहिर (botanist) के लिए

यह मुमकिन होना चाहिए कि वह एक मछली का अंडा ले और उसे अपनी लेबोरेटरी में रखकर नौ महीने या नौ साल के अंदर उसे इंसान की सूरत में तब्दील कर दे। जबकि हम जानते हैं कि यह बिल्कुल नामुमकिन है।

इस नज़रिये के बे-बुनियाद होने की इससे भी ज़्यादा बड़ी दलील यह है कि फ़र्द की तमाम ख़ुसूसियात अव्वल रोज़ ही से जीन में मौजूद होती हैं। बड़ा होकर आदमी जिन औसाफ़ का हामिल होता है, वह सब उसके अव्वलीन ढाँचे में मुकम्मल तौर पर मौजूद रहता है। उसका क़द, उसका रंग, उसका मिज़ाज, उसकी ज़िहानत, सब कुछ अव्वल दिन ही से उसके अंदर पाया जाता है। दूसरे अल्फ़ाज़ में, इंसान का बच्चा पहले दिन से इंसान का बच्चा होता है, वह किसी लम्हा भी मछली या छिपकली का बच्चा नहीं होता। ऐसी हालत में इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता है कि माँ के पेट के इब्तिदाई हफ़्तों में और हमारे मुआयने के पैमाने में वह किस सूरत का दिखाई दे रहा है।

(2) ढाँचे में एवोल्यूशनरी समानताओं से भी अस्लन जो बात साबित होती है, वह सिर्फ़ यह कि मुख़्तलिफ़ जानदार, अपने बुनियादी ढाँचे के ऐतबार से, एक-दूसरे से बिल्कुल अलग-अलग नहीं हैं, बल्कि उनमें कुछ पहलुओं से समानताएँ पाई जाती हैं, मगर इससे किसी भी तरह यह बात साबित नहीं होती कि एक क़िस्म का जानवर दूसरी क़िस्म के जानवर के पेट से निकला है। बैलगाड़ी, घोड़ागाड़ी और कार के ढाँचों में बाज़ पहलुओं से समानताएँ हैं, मगर इससे यह नतीजा निकालना किस क़द्र अजीब होगा कि बैलगाड़ी से घोड़ागाड़ी निकली है और घोड़ागाड़ी के अंदर से कार ने जन्म लिया है और कार के अंदर से हवाई जहाज़ बरामद हुआ है।

(3) फ़ॉसिल्स के मुशाहदे में भी ऊपर ज़िक्र किए हुए नज़रिये के लिए कोई लाज़िमी दलील नहीं है। इस सिलसिले में प्रजातियों के ज़हूर की ज़मानी तर्तीब को अगर बिना बहस मान लिया जाए, तब भी इससे जो बात साबित होती है, वह यह कि ज़मीन के ऊपर हैवानात को आबाद करने में एक तर्तीब है। एक क़िस्म के जानवर एक ज़माने में वजूद में आए। दूसरी क़िस्म के जानवर दूसरे ज़माने में। मसलन जिस ज़माने में बंदर वजूद में आए, ठीक उसी ज़माने में इंसानी नस्ल शुरू नहीं हुई। इसी तरह जिस ज़माने में मछलियाँ या छिपकलियाँ बनीं, उसी वक़्त बंदर की नस्ल का आग़ाज़ नहीं हुआ वग़ैरह। यहाँ भी यक़ीनन वही बहस है कि इससे तख़्लीक़ की तर्तीब साबित होती है, न कि एवोल्यूशन की तर्तीब यानी एक के पेट से दूसरा, दूसरे के पेट से तीसरा निकला। यह एक अलैहिदा ख़याल (hypothesis) है। मज़्कूरा तहक़ीक़ात में इसके लिए सीधे तौर पर कोई दलील मौजूद नहीं है। फ़ॉसिल्स के मुताले में ख़्वाह कितनी ही एहतियात बरती जाए, उनसे जो बात साबित होगी, वह सिर्फ़ यही है कि किस क़िस्म के जानवर की हड्डियाँ कितने हज़ार साल से ज़मीन में दफ़न हैं, न यह कि कौन-सा जानवर किससे निकला है।

मौजूदा एवोल्यूशनरी तहक़ीक़ात से अगर कोई चीज़ साबित होती है तो सिर्फ़ यह कि ज़मीन पर जो मुख़्तलिफ़ क़िस्म के जानदार पाए जाते हैं, वे सब एक ही वक़्त अव्वल रोज़ से ज़मीन पर मौजूद नहीं हो गए हैं, बल्कि उनकी तख़्लीक़ में एक ज़मानी तर्तीब है। अब सवाल यह रह जाता है कि जानदार अपने वक़्त में मुस्तक़िल तौर पर पैदा किया गया या ऐसा हुआ कि प्रजनन के ज़रिये एक जानदार से दूसरे जानदार से निकलता रहा।

जहाँ तक दूसरे ख़याल का ताल्लुक़ है, उसके हक़ में अभी तक कोई दलील या मुशाहदा सामने नहीं आया। दूसरी तरफ़ पहले जानदार की हद तक साइंस-दाँ यह मानते हैं कि वह पहली बार मुस्तक़िल तौर पर वजूद में आया है। फिर जो ख़याल पहले जानदार के लिए सही समझा गया है, वही दूसरे जानदार के लिए भी क्यों सही नहीं हो सकता? जबकि तहक़ीक़ात ने यह भी साबित कर दिया है कि पहला जानदार 'अमीबा' अपने जिस्मानी निज़ाम में बाज़ ऐतबार से वही तमाम पेचीदगियाँ रखता है, जो आख़िरी जानदार 'इंसान' में पाई जाती हैं। अगर पहले पेचीदा जानदार को पहली बार वजूद में लाना क़ुदरत के लिए मुमकिन था तो दूसरे पेचीदा जानदार को पहली बार वजूद में लाना उसके लिए क्यों नामुमकिन हो गया?

एक मिसाल

नई दिल्ली के अंग्रेज़ी अख़बार 'टाइम्स ऑफ़ इंडिया' (8 सितंबर, 2009) में एक ख़बर छपी थी। इस ख़बर का उनवान यह था—

'ख़ुदा का अक़ीदा इंसान के दिमाग़ में पैवस्त है'

'Belief in God hardwired in our brain'

ख़बर में बताया गया था कि इंग्लैंड की ब्रिस्टल यूनिवर्सिटी में एक रिसर्च हुई है, जिसका नतीजा 'टाइम्स ऑनलाइन' में छपा है। इस रिसर्च में बताया गया है कि ख़ुदा का अक़ीदा इंसान के अंदर पैदाइशी तौर पर मौजूद होता है। एवोल्यूशन के दौरान इंसान की इस तरह प्रोग्रामिंग हुई है कि वह ख़ुदा पर अक़ीदा रखे, क्योंकि इससे उन्हें ज़िंदा रहने का ज़्यादा बेहतर मौक़ा मिलता है।

We are born believers. Human beings are programmed by evolution to believe in God, because it gives them a better chance of survival. (p. 17)

इस बयान में अक़ीदा-ए-ख़ुदा का फ़ितरी होना तो रिसर्च का हिस्सा है, लेकिन एवोल्यूशन वाली बात रिसर्च करने वालों का अपना इज़ाफ़ा है। हक़ीक़ी मुशाहिदात में इसी क़िस्म के ख़याल के इज़ाफ़े से ऑर्गेनिक एवोल्यूशन का पूरा नज़रिया क़ायम किया गया है।

फ़र्क़, न कि तब्दीली

24-28 सितंबर, 1990 को एक इंटरनेशनल कांफ्रेंस में शिरकत करने के लिए त्रिपोली (लीबिया) का मेरा एक सफ़र हुआ। इस सफ़र में मेरी मुलाक़ात एक सेक्युलर तालीमयाफ़्ता साहब से हुई। उनसे डार्विन की थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन पर गुफ़्तुगू हुई। मैंने कहा कि मैं डार्विनिज़्म को नहीं मानता। वे हैरत के साथ मुझे देखने लगे। उन्होंने कहा कि डार्विन की थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन तो एक साबितशुदा नज़रिया है। फिर किस तरह आप उसका इनकार कर सकते हैं?

मैंने पूछा कि वह कैसे साबित-शुदा है? उन्होंने कहा कि इस नज़रिये के माहिरीन ने बंदर से लेकर इंसान तक के तमाम ढाँचे जमा किए हैं। उन्हें सिलसिलेवार रखकर देखने से मालूम होता है कि उनमें एक दर्जा ब-दर्जा तब्दीली (gradual change) हुई है। मैंने कहा कि जिस चीज़ को आप 'तब्दीली' कहते हैं, इसे मैं अगर 'फ़र्क़' कहूँ तो आपके पास उसकी तरदीद की क्या दलील होगी?

यह सही है कि हैवानात के दरमियान जिस्मानी बनावट के ऐतबार से फ़र्क़ के साथ कुछ समानताएँ भी है। मसलन हाथी और चूहा ज़ाहिरी तौर पर एक-दूसरे से अलग हैं, लेकिन दोनों रीढ़ की हड्डी वाले जानवर हैं। यही मामला इंसान और हैवान का है। इंसान और हैवान के ढाँचे में भी कुछ समानताएँ हैं, मगर जब तक तजुर्बाती तौर पर यह

साबित न हो जाए कि एक नस्ल से दूसरी नस्ल निकली है, उस वक़्त तक ढाँचे की इस समानता को एवोल्यूशनरी तब्दीली की हैसियत नहीं दी जा सकती। मौजूदा हालत में यह समानता सिर्फ़ फ़र्क़ को बता रही है यानी हर ढाँचा अपनी एक मुस्तक़िल नस्ल को बता रहा है, न यह कि एक से दूसरा निकला। दूसरे से तीसरा और तीसरे से चौथा और इस तरह होते-होते इंसान बन गया। हक़ीक़त यह है कि मौजूदा थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन की बुनियाद सिर्फ़ ख़ुद-साख़्ता वज़ाहत पर है, न कि हक़ीक़तन मुशाहदे और तजुर्बे पर।

जो साइंस-दाँ ऑर्गेनिक एवोल्यूशन को साइंसी हक़ीक़त कहते हैं, उनके नज़दीक इसके दो पहलू हैं। एक है मुख़्तलिफ़ नस्लों के जिस्मानी मज़ाहिर का मामला और दूसरा है क़ानून-ए-एवोल्यूशन का मुताला, जो एवोल्यूशन-पसंद माहिरीन के मुताबिक़, नस्लों की तब्दीलियों के दरमियान पोशीदा तौर पर जारी रहता है, जिसकी बुनियाद पर उन माहिरीन के मुताबिक़, एक नस्ल के जानवर से दूसरी नस्ल का जानवर निकलता है।

एक एवोल्यूशन का माहिरीन जब नस्लों के जिस्मानी मज़ाहिर का मुताला करता है तो गोया कि वह किसी चीज़ का मुताला कर रहा होता है। इसके बर-अक्स, जब वह क़ानून-ए-एवोल्यूशन का मुताला करता है तो उस वक़्त वह अपने मौज़ू के उस पहलू का मुताला कर रहा होता है, जिसे क़ियास या आइडिया कहा जाता है।

हर एवोल्यूशन का माहिरीन जानता है कि दोनों पहलुओं में नौइय्यत के एतबार से फ़र्क़ है। इस मामले में जहाँ तक चीज़ों का ताल्लुक़ है, जिनकी बुनियाद पर एवोल्यूशन के सबूत इकट्ठा किए जाते हैं, उनके सीधे तौर पर दलाइल हासिल किए जा सकतें हैं। मिसाल के तौर पर फ़ॉसिल्स जो खुदाई के ज़रिये ज़मीन की तहों से कसरत से बरामद किए गए हैं, उनका मुताला मुशाहदाती सतह पर मुमकिन है।

इसके बर-अक्स क़ानून-ए-एवोल्यूशन के मामले में सीधे तौर से मुशाहदे के ज़रिये दलील पेश करना मुमकिन नहीं। मसलन एवोल्यूशनरी अमल के दौरान जिस्मानी शक्लों में अचानक तब्दीलियों (mutations) का नज़रिया तमामतर अंदाज़े पर मबनी है, न कि बराह-ए-रास्त मुशाहिदात (direct observations) पर। इस दूसरे मामले में बाहरी तब्दीली तो दिखाई देती है, मगर क़ानून-ए-एवोल्यूशन बिल्कुल नज़र नहीं आता। इसलिए हर एवोल्यूशन पसंद माहिर एवोल्यूशन के मौज़ू के इस दूसरे पहलू में बिल-वास्ता इस्तिदलाल (inference) से काम लेता है, जिसे लॉजिक की ज़बान में 'इन्फेरेंशियल आर्ग्युमेंट' कहा जाता है।

तब्दीली का यह नज़रिया एवोल्यूशन की बुनियाद है। ताहम इस मामले के दो हिस्से हैं। इसका एक हिस्सा मुशाहदा (चश्मदीद तजुर्बा) में आता है यानी जिस्मानी वुजूद, मगर इसका दूसरा हिस्सा मुकम्मल तौर पर नाक़ाबिल-ए-मुशाहदा है। वह सिर्फ़ 'इन्फेरेंशियल आर्ग्युमेंट' के उसूल से काम लेकर फ़लसफ़ा-ए-एवोल्यूशन में शामिल किया गया है।

यह एक आम वाक़िआ है कि इंसान या जानवर से जो बच्चे पैदा होते हैं, वे सब एक ही क़िस्म के नहीं होते। उनमें मुख़्तलिफ़ ऐतबार से कुछ-न-कुछ फ़र्क़ होता है। मौजूदा ज़माने में इस फ़र्क़ का साइंसी मुताला किया गया है। इससे मालूम हुआ है कि माँ की कोख में बच्चे के 'जींस' (genes) के अंदर अचानक तौर पर ख़ुद-ब-ख़ुद तब्दीलियाँ (spontaneous changes) पैदा होती हैं। यही तब्दीलियाँ एक ही माँ-बाप से पैदा होने वाले बच्चों में फ़र्क़ का सबब हैं।

औलाद में एक-दूसरे के दरमियान यह फ़र्क़ एक मुशाहदाती वाक़िआ है, मगर उसके बाद इस मुशाहदे की बुनियाद पर डार्विन ने जो एवोल्यूशन का फ़लसफ़ा बनाया है, वह मुकम्मल तौर पर

नाक़ाबिल-ए-मुशाहदा है, वह सिर्फ़ इन्फेरेंशियल आर्ग्युमेंट के ज़रिये तस्लीम कर लिया गया है। गोया जिस्मानी बनावट का फ़र्क़ क़ाबिल-ए-मुशाहदा है, मगर एक प्रजाति से दूसरी प्रजाति के निकलने का ख़याल नाक़ाबिल-ए-मुशाहदा है।

यहाँ एवोल्यूशन पसंद आलिम यह करता है कि एक सिरे पर वह एक बकरी को रखता है और दूसरे सिरे पर एक जिराफ़ को। इसके बाद वह फोसिल (fossil) के कुछ दरमियानी नमूनों को लेकर यह नज़रिया बनाता है कि इब्तिदाई बकरी के कई बच्चों में से एक बच्चे की गर्दन इत्तिफ़ाक़न कुछ लंबी थी। इसके बाद इस लंबी गर्दन वाली बकरी की औलाद हुई। इसमें गर्दन की लंबाई कुछ और बढ़ गई। इसी तरह करोड़ों साल के दौरान गर्दन की यह लंबाई नस्ल-दर-नस्ल जमा होती रही, यहाँ तक कि इब्तिदाई बकरी की अगली औलाद आख़िरकार जिराफ़ जैसा जानवर बन गई। इसी नज़रिये के तहत चार्ल्स डार्विन ने अपनी किताब 'द ओरिजिन ऑफ़ स्पीशीज़—The Origin of Species' में लिखा है कि मुझे यह बात तक़रीबन यक़ीनी मालूम होती है कि एक मामूली खुरदार चौपाया जिराफ़ जैसे जानवर में तब्दील हो सकता है।

It seems to me almost certain that an ordinary hoofed quadruped might be converted into a giraffe. (p. 169)

इस मामले में बकरी के बच्चों में फ़र्क़ होना अपने आपमें ख़ुद एक मालूम वाक़िआ है, मगर इस फ़र्क़ का करोड़ों साल तक नस्ल-दर-नस्ल जमा होते हुए उसका जिराफ़ बन जाना मुकम्मल तौर पर नाक़ाबिल-ए-मुशाहदा और नाक़ाबिल-ए-तजुर्बा है। एवोल्यूशन का नज़रिया एक जानवर और दूसरे जानवर के दरमियान नज़र आने वाले फ़र्क़ की बुनियाद पर इन्फेरेंशियल आर्ग्युमेंट के ज़रिये बनाया गया है, न कि सीधे तौर पर ख़ुद मुशाहदे के ज़रिये।

एवोल्यूशन इल्म की कसौटी पर

ऑर्गेनिक एवोल्यूशन के मुताल्लिक़ चार्ल्स डार्विन की किताब 1859 में छपकर आई तो मग़रिबी लोगों के दरमियान उसे ग़ैर-मामूली मक़बूलियत हासिल हुई। इस किताब में ज़िंदगी की पैदाइश के बारे में जो नज़रिया पेश किया गया था, वह उसके नाम से ज़ाहिर है। इसके पहले एडीशन में टाइटल पर हस्ब-ए-ज़ेल नाम दर्ज था—

‘The Origin of Species By Means of Natural Selection,

or

The Preservation of Favoured Species in the Struggle for Life’

डार्विन के नज़रिये का खुलासा यह था कि किसी जानदार से जब चंद बच्चे पैदा होते हैं तो उनमें थोड़ा-थोड़ा फ़र्क़ होता है। उनमें से किसी का फ़र्क़ उसे दूसरे हम-जिंसों के मुकाबले में ज़्यादा बेहतर पोज़ीशन में कर देता है, इसी बिना पर वह ज़िंदा रहता है और दूसरे ख़त्म हो जाते हैं। यह नस्ल-दर-नस्ल बढ़ता रहता है, यहाँ तक कि लाखों साल में यह नौबत आती है कि एक नस्ल का जानवर दूसरी नौ में तब्दील हो जाता है। मसलन बकरी का घोड़ा बन जाना। इस तरह मुख़्तलिफ़ जानदार एवोल्यूशन की सीढ़ियों पर चढ़ते रहते हैं, यहाँ तक कि इंसान वजूद में आ जाता है।

ब-ज़ाहिर इस ख़ूबसूरत नज़रिये में बहुत से ख़ला थे। मसलन यह कि एवोल्यूशन अगर एक मुसलसल अमल है तो क्यों ऐसा है कि ज़मीन की परतों से हासिल होने वाले फ़ॉसिल्स सिर्फ़ कमाल के मरहले को पहुँची हुईं नस्लों का नमूना पेश करते हैं? क्यों न ऐसा हुआ कि दरमियानी मरहले की क़िस्में भी काफ़ी तादाद में मौजूद होतीं यानी ऐसे जानवर, जो आधा एक जैसे हों और आधा दूसरे जैसे?

If evolution has been a continuous process, why does the fossil record only show us apparently settled and established species. Why does it not include an abundance of intermediate forms.

डार्विन का जवाब यह था कि फ़ॉसिल्स का ज़ख़ीरा अभी कम है। आइंदा जब ज़्यादा फ़ॉसिल्स हासिल हो चुके होंगे तो यह कमी दूर हो जाएगी। डार्विन के बाद मज़ीद बहुत ज़्यादा फ़ॉसिल्स इंसान के इल्म में आए, मगर यह कमी उसके बावजूद ब-दस्तूर बाक़ी रही।

इस क़िस्म की बहुत ख़ामियों के बावजूद डार्विनिज़्म को क्यों इतनी ज़्यादा मक़बूलियत हासिल हुई? इसकी वजह यह थी कि यह नज़रिया 19वीं सदी के मग़रिबी इंसान की नौ-आबादियाती तौसी-पसंदी (colonial extensionism) के ऐन मुताबिक़ था। बर्ट्रेंड रसेल के अल्फ़ाज़ में, यह आज़ाद इकोनॉमी के उसूल को जंगलात और हैवानात की दुनिया तक वसी करना था।

> It was an extension to the animal and vegetable world of laissez-faire economics.

थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन के दलाइल जिस मेयार पर उतरते हैं, वह कौन-सा मेयार है? वह मेयार है थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन का सीधे तौर पर तजुर्बे में न आना, बल्कि ऐसे सुराग़ों का हासिल होना जिनसे एवोल्यूशन का सही होना लॉजिकल लगता है। डार्विनिज़्म एक ऐसा नज़रिया है, जिसका लेबोरेटरी में तजुर्बा नहीं किया गया है, यह सिर्फ़ 'अक़ीदा' है। फिर इसे किस बिना पर इल्मी हक़ीक़त समझा जाता है। इसकी वजह ए.ई. मेंडर के अल्फ़ाज़ में यह है—

(1) यह नज़रिया तमाम मालूम हक़ीक़तों से हम-आहंग (consistent) है।
(2) इस नज़रिये में इन बहुत से वाक़िआत की तौजीह मिल जाती है, जो उसके बग़ैर समझे नहीं जा सकते।

(3) दूसरा कोई नज़रिया अभी तक ऐसा सामने नहीं आया, जो वाक़िआत से इस दर्जा मुताबिक़त रखता हो।

(Clearer Thinking, p. 112)

यह दलील जो थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन को हक़ीक़त क़रार देने के लिए एक मेयार समझी जाती है, यही दलील ज़्यादा शिद्दत के साथ मज़हब के हक़ में मौजूद है। ऐसी हालत में जदीद ज़ेहन के पास कोई वाज़ेह जवाज़ नहीं है कि वह क्यों एवोल्यूशन को साइंसी हक़ीक़त क़रार देता है और मज़हब को साइंसी ज़ेहन के लिए नाक़ाबिल-ए-क़बूल ठहराता है।

थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन पर शुबहात

इंडोनेशिया के एक जज़ीरे में 2003 में किसी क़दीम इंसान का एक फ़ॉसिली ढाँचा मिला। माहिरीन की एक इंटरनेशनल टीम ने गहराई के साथ उसका मुताला किया। इस मुताले के जो नताइज सामने आए हैं, उससे मालूम हुआ कि यह ढाँचा 18 हज़ार साल पुराना है। इस मुताले का ख़ुलासा नई दिल्ली के अंग्रेज़ी अख़बार 'टाइम्स ऑफ़ इंडिया' (8 मार्च, 2010) में छपा है। अहल-ए-इल्म का ख़याल है कि यह दरयाफ़्त अचानक इंसानी एवोल्यूशन के बारे में साइंसी नज़रियात के ख़िलाफ़ एक बड़ा चैलेंज बन गई है। इंसानी एवोल्यूशन का अमल उससे ज़्यादा पेचीदा है, जैसा कि पहले समझ लिया गया था।

Almost overnight, the find threatened to change science's understanding of human evolution. It would mean contemplating the possibility that not all the answers to human evolution lie in Africa, and that human development was more complex than thought. (p. 23)

हकीकत यह है कि ऊपर ज़िक्र की गई दरयाफ़्त थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन के लिए बड़ा चैलेंज नहीं, बल्कि यह थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन का एक बड़ा इनकार है। इससे सिर्फ़ यह साबित होता है कि इंसानी एवोल्यूशन का नज़रिया उससे ज़्यादा पेचीदा है, जितना इसे समझ लिया गया था। अस्ल यह है कि इंसानी ज़िंदगी का वाक़िआ इससे ज़्यादा पेचीदा है कि थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन के ज़रिये उसे समझा जा सके।

Human development is far more complex to be explained by the evolution theory.

हकीकत यह है कि एवोल्यूशन का नज़रिया सिर्फ़ एक ख़याल है, न कि हक़ीक़ी मआनों में कोई इल्मी नज़रिया। जदीद तालीमयाफ़्ता लोगों के दरमियान वह सिर्फ़ इसलिए फैल गया कि उन्हें यह नज़र आया कि यह उनके लिए एक कामचलाऊ नज़रिया है। ताहम इस नज़रिये का साबितशुदा वाक़िआ होना अभी तक अहल-ए-इल्म के दरमियान इख़्तिलाफ़ी मसला बना हुआ है।

निएंडरथल मैन

थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन के हिमायतियों ने बहुत से क़दीम इंसान दरयाफ़्त किए हैं। मसलन पिल्टडाउन मैन, निएंडरथल मैन, पीकिंग मैन, जावा मैन वग़ैरह। क़दीम इंसान की ये तमाम सूरतें फ़ॉसिल्स की बुनियाद पर बनाई गई हैं, जो ज़मीन में खुदाई से बरामद हुई हैं। थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन ज़िंदगी की मुख़्तलिफ़ क़िस्मों के लिए जिस अमल को फ़र्ज़ करता है, उसके मुताबिक़ दरमियानी प्रजातियाँ (intermediate species) का वजूद भी लाज़िमन होना चाहिए, मगर ऐसी नस्लें अभी तक गुमशुदा कड़ियों की हैसियत रखती हैं।

डार्विन ने तस्लीम किया था कि दरमियानी नस्लों के नमूने हमारे पास मौजूद नहीं हैं। ताहम डार्विन के बाद क़दीम फ़ॉसिल्स की बुनियाद पर बहुत-सी अजीब-ओ-ग़रीब इंसानी शक्लें बनाई गई हैं और यह फ़र्ज़ किया जाता है कि ये इंसानी सिलसिला-ए-हयात की क़दीम एवोल्यूशनरी कड़ियाँ हैं।

उन्ही में से एक निएंडरथल मैन है, जो जर्मनी की 'निअंडर' नामी वादी की तरफ़ मंसूब है। इस क़िस्म की हड्डियाँ और ढाँचे 1856 से 1908 तक एशिया, यूरोप, शुमाली अफ़्रीक़ा के तक़रीबन 50 मक़ामात पर मिले। प्रोफ़ेसर मार्सलिन बोल ने इन टुकड़ों का मुशाहदा करके उनकी जो ताबीर की, इसे आम तौर पर तस्लीम करते हुए उसे इब्तिदाई इंसानी सिलसिले की एक कड़ी मान लिया गया। गुमशुदा कड़ियों में से एक कड़ी मालूम कर ली गई।

निएंडरथल मैन की तस्वीरें किताबों में छपने लगीं। हत्ता कि इसके मुजस्समे बन गए, मगर बाद में बॉटनी के माहिरीन ने जो तहक़ीक़ात कीं, उनसे पता चला कि प्रोफ़ेसर बोल ने अंदाज़ा करने में कई अहम ग़लतियाँ की थीं। 1955 में विलियम एस्ट्राबस (जॉनसन हॉपकिंस यूनिवर्सिटी) और ए.जे.क्यू. (लंदन) ने निएंडरथल मैन के बनाए गए ढाँचे का नए सिरे से जाइज़ा लिया। यह रिपोर्ट मुकम्मल तौर पर क्वार्टरली रिव्यू में छप चुकी है।

[Quarterly Review of Biology XXXIII (1957)]

माहिरीन लिखते हैं कि निएंडरथल मैन का ढाँचा, जो कि 40-50 साल की उम्र के एक आदमी का ढाँचा लगता है, गठिया की बीमारी ने आदमी के निचले जबड़े और उसकी गर्दन और पूरे ढाँचे को मुतास्सिर किया। उस आदमी के सिर का आगे की तरफ़ झुकाव, जिसे प्रोफ़ेसर बोल ने नोट किया था, वह कुछ हद तक उसकी बीमारी के सबब से था। हक़ीक़तन उस आदमी का ढाँचा वैसा ही था, जैसा

आज एक औसत फ़्रांसीसी आदमी का ढाँचा। हत्ता कि जदीद तहक़ीक़ात ने यह भी बताया है कि निएंडरथल मैन के दिमाग़ का साइज़ भी तक़रीबन वही था, जो आज एक औसत यूरोपीय शख़्स का होता है। उसके बाल दुरुस्त करके और मौजूदा लिबास पहनाकर खड़ा कर दिया जाए तो आज के इंसान से वह कुछ भी मुख़्तलिफ़ मालूम नहीं होगा। हाल में निएंडरथल मैन के जो मज़ीद फ़ॉसिल्स मिले हैं, वे भी साबित करते हैं कि वह इब्तिदाई कड़ी नहीं, बल्कि आज के एक इंसान की मानिंद था। निएंडरथल इंसान, लफ़्ज़-ए-इंसान के तमाम मफ़हूम के ऐतबार से मुकम्मल था।

(F। Clark Nowell, Early Man, New York, Time-Life Book, 1968, pp. 123-24)

अमेरिका के एक कंप्यूटर स्पेशलिस्ट मिस्टर डेविड कॉपऐज जो नासा (NASA) में एक बड़ी पोस्ट पर थे, उन्हें सर्विस से निकाल दिया गया। उनका क़ुसूर यह था कि वे तख़्लीक़ के बारे में 'ज़हीन डिज़ाइन' (intelligent design) के तसव्वुर को मानते थे। एन.बी.सी. न्यूज़ (12 मार्च, 2012) के मुताबिक़, उनका ख़याल था कि तख़्लीक़ में ज़रूर एक आला हस्ती का हाथ है, क्योंकि ज़िंदगी इतनी ज़्यादा पेचीदा है कि वह तन्हा एवोल्यूशन के अमल के ज़रिये वजूद में नहीं आ सकती।

A higher power must have had a hand in creation because life is too complex to have developed through evolution alone. [www.nbcnews.com/id/wbna46701591 (accessed on 03.11.21)]

एक अमरीकी स्कॉलर जॉन वैस्ट ने इस मामले पर तबसिरा करते हुए कहा कि डेविड की टिप्पणी डार्विन की थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन

को संदेहजनक साबित करता है, जबकि मॉडर्न तबक़े का यह हाल है कि उसने ऐसे किसी भी शख़्स के ख़िलाफ़ अमलन एक जंग छेड़ रखी है, जो डार्विन से इख़्तिलाफ़ करे।

पिल्टडाउन मैन

थ्योरी ऑफ़ एवोल्यूशन का दावा है कि इंसान और हैवान दोनों एक ही नस्ल से हैं। इंसान दूसरे हैवानात ही की तरक़्क़ीयाफ़्ता नस्ल है, न कि कोई अलैहिदा नस्ल। इस दावे के सिलसिले में जो सवालात पैदा होतें हैं, उनमें से एक अहम सवाल यह है कि अगर यह वाक़िआ है तो बीच की वे नस्लें कहाँ हैं, जो एवोल्यूशनरी अमल के मुताबिक़ अभी मौजूदा इंसान के मक़ाम तक नहीं पहुँची थीं। वे अभी हैवान और इंसान के दरमियान एवोल्यूशन के मराहिल तय कर रही थीं।

इस नज़रिये के हिमायतियों के पास इसके जवाब में क़ियास व गुमान के सिवा और कुछ नहीं है। डार्विन ने अपनी किताब में बार-बार 'हम बख़ूबी क़ियास कर सकते हैं' (We may well suppose) का जुमला इस्तेमाल किया है। उसका कहना है कि यक़ीनन ऐसा हुआ है, अगरचे अभी हमें उसके तमाम नमूने हासिल नहीं हो सके हैं। इस फ़र्ज़ी यक़ीन की बुनियाद पर एक पूरा शजरा तैयार कर लिया गया है, जो इंसान की नस्ल को बंदर की नस्ल से जा मिलाता है। बंदर और इंसान के दरमियान की ये कड़ियाँ तमाम-की-तमाम क़ियासी कड़ियाँ हैं, मगर बिल्कुल ग़लत तौर पर उन्हें गुमशुदा कड़ियाँ (missing links) कहा जाता है।

इन ख़यालाी क़िस्म की गुमशुदा कड़ियों की तलाश पिछले एक सौ साल से जारी है। बार-बार दुनिया को यह यक़ीन दिलाने की कोशिश की

जाती है कि फ़लाँ गुमशुदा कड़ी हाथ आ गई है। उन्हीं में से एक कड़ी वह है, जिसे 'पिल्टडाउन मैन' कहा जाता है।

पिल्टडाउन मैन को तक़रीबन आधी सदी तक 'अज़ीम दरयाफ़्त' कहा जाता रहा। यह समझा जाता रहा कि यह पूर्व ऐतिहासिक वह इंसान है, जो एक तरफ़ इंसानी औसाफ़ के हामिल थे और दूसरी तरफ़ वह बंदर की भी कुछ ख़ुसूसियात अपने अंदर रखते थे। तारीख़ की किताबों में बाक़ाएदा उसके हवाले शामिल हो गए। वह कॉलेजों के कोर्स में पढ़ाया जाने लगा। मिसाल के तौर पर आर.एस. लल की मशहूर किताब 'ऑर्गेनिक एवोल्यूशन' सात सौ पेज की किताब है और टेक्स्ट बुक की हैसियत से राइज़ है। इसमें इंसान और हैवान के दरमियान जिन मालूम कड़ियों का ज़िक्र किया गया है, वह हस्ब-ए-ज़ेल चार हैं—

1. Ape-man of Jawa
2. Piltdown man
3. Neanderthal Man
4. Cro-magnon Man

मगर बाद की तहक़ीक़ात से साबित हुआ कि पिल्टडाउन मैन एक मुकम्मल फ़रेब था। इस सिलसिले में साइंसदानों के तहक़ीक़ी नताइज मुख़्तलिफ़ किताबों और लेखों में शाए हो चुके हैं। इसे जानने के लिए एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका (1984) का मक़ाला या 'पिल्टडाउन फ़ोर्जरी' नामी किताब का मुताला काफ़ी है, जिसे ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस ने शाए किया है। चंद किताबों के नाम ये हैं—

1. Bulletin of the British Museum (Natural History), Vol. 2, No. 3 and 6
2. J.S. Weiner, The Piltdown Forgery (1955)

3. Ronald Millar, The Piltdown Man (1972)
4. Readers Digest, November 1956
5. Popular Science (Monthly) 1956

चार्ल्स डॉसन नामी एक अंग्रेज़ फ़ॉसिल्स को जमा करने का बहुत शौक़ीन था। 1912 का वाक़िआ है कि वह कुछ हड्डियों को लेकर ब्रिटिश म्यूज़ियम पहुँचा और यह ख़बर दी कि ये टुकड़े उसे जुनूबी इंग्लैंड के एक मक़ाम पिल्टडाउन में एक ग़ुफ़ा के अंदर कंकरियों के दरमियान पड़े हुए मिले हैं। ब्रिटिश म्यूज़ियम के एक नामवर आलिम डॉक्टर आर्थर स्मिथ वुडवर्ड ने इसमें ख़ुसूसी दिलचस्पी ली और बताए हुए मक़ाम पर पहुँचकर खुदाई के ज़रिये मज़ीद टुकड़े हासिल किए। इस तरह बीस से कुछ ज़्यादा हड्डियों और दाँत के टुकड़े जमा करके उनका मुताला शुरू किया गया।

इन हासिलशुदा टुकड़ों में सबसे ज़्यादा नुमायाँ एक जबड़े का टूटा हुआ हिस्सा था, जो वाज़ेह तौर पर एक बंदर का जबड़ा मालूम होता था, मगर इसमें एक ख़ास चीज़ बंदर से मुख़्तलिफ़ थी। यह उसमें लगे हुए दाढ़ के दो दाँत थे, जिनकी ऊपर की सतह हमवार (flat) थी, जो कि सिर्फ़ किसी इंसानी दाँत ही में हो सकती है। चुनाँचे क़ियास कर लिया गया कि यह जबड़ा किसी क़दीम इंसान का है और इसके बाद निहायत आसानी से इसे एवोल्यूशन की एक गुमशुदा कड़ी क़रार दे दिया गया। तलाश करने वालों ने जल्द ही पिल्टडाउन के आस-पास वह खोपड़ी भी हासिल कर ली, जो पुराने ज़माने के इस इंसान के सिर पर क़ुदरत ने पैदा की थी।

उपर बयान की गई गुफ़ा में साबिक़ा तारीख़ी ज़माने के कुछ जानवरों के आसार मिले, जिनसे यह मुतय्यन हो गया कि 'पिल्टडाउन मैन' क़दीम बर्फ़ानी दौर का इंसान है, जो पाँच लाख साल पहले ज़मीन के ऊपर गुज़र चुका है। इस तहक़ीक़ ने दूसरी मालूम की हुई गुमशुदा

कड़ियों के मुकाबले में इसे क़दीमतरीन मालूम इंसान की हैसियत दे दी। चार्ल्स डॉसन अज़ीम एज़ाज़ात का मुस्तहिक़ क़रार दिया गया, क्योंकि उसने साइंस की एक पेचीदा गुत्थी को हल करने में मदद की थी।

पत्थर में तब्दीलशुदा ये इंसानी हड्डियाँ जो हासिल हुई थीं, वह पूरे इंसानी ढाँचे के सिर्फ़ कुछ टुकड़े थे, मगर माहिरीन ने उनकी रोशनी में क़ुव्वत-ए-तसव्वुर (power of imagination) से काम लेकर पाँच लाख साल पहले के इंसान का एक पूरा ढाँचा तैयार कर लिया, जो अपनी बेढंगी पेशानी और बंदरनुमा जबड़ों के साथ 40 साल तक साइंसदानों का मर्कज़-ए-तवज्जो बना रहा; मगर 1950 में यकायक पिल्टडाउन मैन की हैसियत को सख़्त धक्का लगा, जब जियोलॉजिस्ट[4] डॉक्टर केनेथ ओकले ने एक केमिकल तरीक़े को इस्तेमाल करके उसकी तारीख़ मालूम की।

यह एक उसूल है कि कोई हड्डी जितने दिनों तक ज़मीन में दफ़न पड़ी रहेगी, वह इसी के बक़द्र ज़्यादा मिक़दार में एक मख़्सूस केमिकल को जज़्ब करती है जिसका नाम फ़्लोरीन है। डॉक्टर ओकले के तजुर्बे से मालूम हुआ कि हासिलशुदा हड्डियों में जितनी फ्लोरीन पाई जाती है, उसके लिहाज़ से उसकी उम्र सिर्फ़ 50 हज़ार साल होनी चाहिए, न कि पाँच लाख साल।

बाद की तहक़ीक़ात से मालूम हुआ कि पिल्टडाउन मैन की खोपड़ी के मुताल्लिक़ ओकले का अंदाज़ा बिल्कुल सही था, मगर उसी की बुनियाद पर उसने जबड़े की उम्र भी जो उसी क़द्र फ़र्ज़ कर ली गई थी, वह सही नहीं थी। जबड़ा दर-हक़ीक़त मौजूदा ज़माने के एक बंदर का था, जो फ़र्ज़ी तौर पर खोपड़ी के साथ जोड़ दिया गया था।

---

[4] **जियोलॉजिस्ट** — यह वह शख़्स है, जो चट्टानों और चट्टानों की तशकील के ज़रिये ज़मीन की तारीख़ का मुताला करता है।

ओकले की दरयाफ़्त ने पिल्टडाउन को दोबारा एक पहेली बना दिया, क्योंकि पाँच लाख साल पहले के एक ढाँचे को तो गुमशुदा कड़ी फ़र्ज़ किया जा सकता था, मगर एक ऐसा जानदार जो सिर्फ़ 50 हज़ार साल पहले मौजूद रहा हो, उसका गुमशुदा कड़ी होना बिल्कुल नाक़ाबिल-ए-क़ियास था।

इसके बाद 1953 की एक शाम को लंदन की एक दावत में ओकले की मुलाक़ात ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी में एंथ्रोपोलॉजी [5] के एक प्रोफ़ेसर डॉक्टर जे.एस. वीनर से हुई। डॉक्टर वीनर डॉक्टर ओकले की बातों से बहुत मुतअस्सिर हुआ। इसके बाद घर आकर उसने सोचना शुरू किया कि आख़िर उसकी हक़ीक़त क्या है। सबसे ज़्यादा हैरानी उसे पिल्टडाउन मैन के दाँत के बारे में थी। 'एक बंदरनुमा जबड़े में इंसानी दाँत जो इस तरह हमवार हैं, जैसे किसी ने रेती से...' यह सोचते हुए अचानक एक नया ख़याल उसके ज़ेहन में आया, 'ऐसा तो नहीं है कि किसी ने रेती से घिसकर उन दाँतों को चिकना कर दिया हो।' उसे ऐसा महसूस हुआ, जैसे वह हक़ीक़त के क़रीब पहुँच गया है। अब वह अपने सामने तहक़ीक़ का एक नया मैदान पा रहा था।

वीनर ने अपने एक साथी सर विल्फ्रेड ले ग्रोस क्लार्क की मदद से चिंपाज़ी का एक दाढ़ का दाँत लिया, उसे रेती से घिसकर हमवार किया और उसके बाद उसे रंगकर देखा तो वह पिल्टडाउन के दाँत के बिल्कुल जैसा था। इसके बाद वह दोनों ब्रिटिश म्यूज़ियम गए, ताकि पिल्टडाउन मैन के जबड़े हासिल करके उसके मुताल्लिक़ अपने अंदाज़े की तहक़ीक़ करें। लोहे का एक तालाबंद बक्सा जो ख़ास तौर पर फ़ायर प्रूफ़ बनाया गया था, उसके दरवाज़े खोले और

[5] **एंथ्रोपोलॉजी**— हाल और माज़ी में इंसानी ज़िंदगी, रवैय्ये, समाज, तहज़ीब और ज़बान वग़ैरह का साइंसी मुताला।

उसके अंदर से पिल्टडाउन मैन के ढाँचे के 'मुक़द्दस' टुकड़े निकाले गए, ताकि साइंसी तरीक़ों के मुताबिक़ उनका गहरा तज्ज़िया किया जाए। एक्स-रे मशीन और दूसरे जदीद क़िस्म के आलात हरकत में आ गए। एक मख़्सूस क़िस्म का केमिकल प्रोसेस भी इस्तेमाल किया गया, जो नाइट्रोजन की कमी को मालूम करके यह बताता है कि इस पर कितना वक़्त गुज़र चुका है।

वीनर का अंदाज़ा सही था। इस जाँच-पड़ताल से मालूम हुआ कि पिल्टडाउन मैन के जबड़े की हड्डी कोई पुरानी हड्डी नहीं थी, बल्कि आम क़िस्म के एक बंदर से हासिल की गई थी। हड्डी का क़ुदरती रंग चूँकि फ़ॉसिल्स बनने के बाद बदल जाता है, इसलिए फ़रेब और निहायत होशियारी के साथ इसे महोगनी रंग में रंग दिया था। रंग को ऐन मुताबिक़ बनाने के लिए चंद मख़्सूस चीज़ें इस्तेमाल की गई थीं। गहरे मुताले के बाद मालूम हुआ कि दाँत की सतह पर ऐसी ख़राशे मौजूद हैं, जो बिला-शुबह इस बात की ख़बर दे रही हैं कि दाँतों को रगड़ा गया है। इसके अलावा उसके किनारों में ग़ैर-फ़ितरी क़िस्म की तेज़ी भी थी, जो कि सिर्फ़ रेती से रगड़ने ही की सूरत में हो सकती है।

1953 में इन तीनों माहिरीन ओकले, वीनर, क्लार्क ने ऐलान किया कि जबड़ा और दाँत बिल्कुल फ़र्ज़ी हैं। इसके बाद वीनर ने यह मालूम करने की कोशिश की कि इतने बड़े फ़रेब का घड़ने वाला कौन था। उसने तमाम मुमकिन तफ़्सीलात जमा करना शुरू की, मुल्कभर के सफ़र किए, ताकि पिल्टडाउन के वाक़िए से मुताल्लिक़ जो अफ़राद हैं, उनसे गुफ़्तुगू करे,जो लोग मर चुके थे, वह उनके अज़ीज़ और दोस्तों से मिला। अख़बार की पुरानी फ़ाइलों से इस सिलसिले की तमाम रिपोर्टें पढ़ डालीं।

इस गहरे मुताले के बाद पिल्टडाउन के वाक़िए से तमाम अफ़राद बिल्कुल बरी नज़र आए, सिर्फ़ एक शख़्स चार्ल्स डॉसन संदिग्ध लग रहा था, जो इस वाक़िए का हीरो था। तमाम मालूमात इशारा कर रही थी कि इस बे-बुनियाद बात का अस्ल रचयिता डॉसन ही है।

चार्ल्स डॉसन एक कामयाब वकील था। वह इंग्लैंड के उस इलाक़े का बाशिंदा था, जहाँ फ़ॉसिल कसरत से पाए जाते हैं। डॉसन को फ़ॉसिल से बहुत दिलचस्पी पैदा हो गई, उसका यही मशग़ला बन गया कि वह फ़ॉसिल जमा किया करता था। पिल्टडाउन मैन के वाक़िए से पहले वह दौर-ए-क़दीम के कई जानवरों के ढाँचे हासिल करके लंदन के म्यूज़ियमों में भेज चुका था।

बाद में डॉसन को वह मज़ाक़ सूझा, जिसने 40 साल से ज़्यादा मुद्दत तक अहल-ए-इल्म को फ़रेब में मुब्तला रखा। डॉसन के एक मुलाक़ाती ने बताया कि एक मर्तबा वह आवाज़ दिए बग़ैर डॉसन के कमरे में चला गया। उसने देखा कि डॉसन कुछ तजुर्बात में मशग़ूल है। वह मुख़्तलिफ़ बर्तनों में खारा केमिकल और रंगीन अर्क़ डालकर हड्डियों को उसमें डुबोए हुए था। डॉसन ने उसे देखकर घबराए हुए अंदाज़ में वज़ाहत की कि वह फ़ॉसिल को रंग रहा था, ताकि यह मालूम करे कि क़ुदरती तौर पर उनका जो रंग है, वह कैसे बनता है। इस क़िस्म के और वाक़िआत मालूम हुए, जिन्होंने उस ख़याल की तस्दीक़ कर दी कि इस झूठे किस्से को गढ़ने वाला डॉसन है, मगर यह सब कुछ उस वक़्त हुआ, जबकि इससे बहुत पहले डॉसन 1916 में 52 बरस की उम्र में ऐन अपनी शोहरत के वक़्त मर चुका था।

डॉसन ने अपने झूठ को मुकम्मल करने के लिए एक और तरकीब की। उसने पत्थर के कुछ औज़ार पेश किए और बताया कि ये उसे पिल्टडाउन के मक़ाम पर मिले हैं। चुनाँचे यह तस्लीम कर लिया गया कि ये पत्थर के वह औज़ार हैं, जिनसे पाँच लाख साल पहले

का नाक़िस इंसान काम लिया करता था, मगर बाद की तहक़ीक़ात ने उन्हें भी बिल्कुल जाली साबित कर दिया। डॉसन ने इसी क़िस्म का एक पत्थर का औज़ार हैरी मॉरिस को दिया था। मॉरिस एक बैंक क्लर्क था और पत्थर के पुराने नमूने जमा करने का शौक़ीन था। बाद में मॉरिस अपनी तहक़ीक़ से इस नतीजे पर पहुँचा कि यह पत्थर का औज़ार बिल्कुल जाली है। मॉरिस ने इस पत्थर को अपनी मख़्सूस अलमारी में दूसरे नमूनों के साथ रख छोड़ा था। जब वीनर को इसकी इत्तिला मिली तो उसका शौक़ बढ़ा, मगर इससे बहुत पहले मॉरिस का इंतिक़ाल हो चुका था।

वह पत्थर कहाँ है? वीनर को यह सवाल परेशान करने लगा। मॉरिस के मरने के बाद उसकी अलमारी दो लोगों की विरासत में जा चुकी थी। ताहम वीनर ने उसे ढूँढ निकाला। अलमारी खोलने पर मालूम हुआ कि उसके अंदर बारह ख़ाने हैं, जिनमें बहुत से नमूने लेबल लगे हुए रखे हैं। आख़िरी ख़ाने में पिल्टडाउन का पत्थर का औज़ार था। उस पर मॉरिस के अपने हाथ से लिखे हुए ये अल्फ़ाज़ दर्ज थे—

“Stained by C. Dawson with intent to defraud.”

यानी उसे डॉसन ने बिल्कुल जाली तौर पर ख़ुद अपने हाथों से रँगा था, ताकि दुनिया को धोखा दे कि यह बहुत पुराने ज़माने का औज़ार है। एक नोट में मॉरिस ने यह भी बताया था कि हाइड्रोक्लोरिक एसिड पत्थर के भूरे रंग को ख़त्म करके उसे मामूली सफ़ेद रंग के पत्थर में तब्दील कर देता है।

तब्सिरा

यह वाक़िआ बता रहा है कि दौर-ए-क़दीम की हड्डियों के टुकड़े जमा करके उनकी बुनियाद पर जो क़ियासी ढाँचे खड़े किए गए हैं, उनकी हक़ीक़त क्या है। बेशक दौर-ए-क़दीम में कोई डॉसन मौजूद

नहीं था, जो हमें धोखा देने के लिए इन हड्डियों का हुलिया बिगाड़ देता, मगर लाखों और करोड़ों बरस तक आँधी, तूफ़ान और ज़लज़ले, ज़मीन के ऊपर जो उलट-पलट कर रहे थे, उनकी वजह से हड्डियों के मक़ाम और उनकी बनावट में वह सारी तब्दीलियाँ होना मुमकिन हैं जिनका आज हमने 'डॉसन मैन' की सूरत में तजुर्बा किया है। फिर एवोल्यूशन के हिमायतियों के पास वह कौन-सा इल्म-ए-यक़ीन है, जिसकी बुनियाद पर वह ना-मालूम माज़ी के बारे में इतने यक़ीन के साथ अपना दावा पेश कर रहें हैं।

इस मौज़ू पर अपने मज़मून को ख़त्म करते हुए माहनामा 'पॉपुलर साइंस' का मज़मून-निगार आख़िर में लिखता है—

पिल्टडाउन की ख़याली दास्तान अब हमेशा के लिए ख़त्म हो चुकी है, मगर एक पहेली अभी तक हल न हो सकी। वह क्या मक़सद था जिसके लिए डॉसन ने इतना बड़ा झूठ तैयार किया? उसे इस काम से कोई माली फ़ायदा हासिल नहीं हुआ। ब्रिटिश म्यूज़ियम को उसने जो हड्डियाँ फ़राहम की थीं, वह उसने महज़ तोहफ़े के तौर पर पेश की थीं। उसने उनकी कोई क़ीमत वसूल नहीं की। फिर क्या शोहरत उसका मक़सद था? क्या इस ज़बरदस्त फ़रेब के ज़रिये वह महज़ एक मज़ाक़ करना चाहता था? उस अंग्रेज़ जालसाज़ को आख़िर किस चीज़ ने इस काम पर आमादा किया? इसे मालूम करना साइंसी तजुर्बों की पहुँच से बाहर है और शायद वह हमेशा एक राज़ ही रहेगा।

यह बयान दर-हक़ीक़त इस बात का एतिराफ़ है कि एक्सपेरिमेंटल इल्म (Tested Knowledge) अपनी महदूदियात की वजह से कायनात की वज़ाहत नहीं कर सकता। वह हमारी दुनिया के सिर्फ़ बाज़ वाक़िआत का तज्ज़िया कर सकता है, जबकि हमें एक ऐसे इल्म की ज़रूरत है, जो तमाम वाक़िआत का तज्ज़िया करे और जो तमाम हक़ीक़तों को हम पर खोल दे। ऐसा कामिल इल्म सिर्फ़ 'वह्य'

(Divine Revelation) का इल्म है, इसके सिवा कोई और इल्म इस ज़रूरत को पूरा नहीं कर सकता।

एवोल्यूशन का क़ाफ़िला
कायनात की मालूम शाह-राहों में अपना रास्ता न पा सका

डार्विन (1809-1882) को यक़ीन था कि ज़िंदगी एक एवोल्यूशनरी अमल का नतीजा है। कीड़े-मकोड़े तरक़्क़ियाती तब्दीलियाँ करते-करते बकरी बन गए और बकरी ने तरक़्क़ी करके जिराफ़ की सूरत इख़्तियार कर ली। पिछले सौ बरस के दौरान यह एक तस्लीमशुदा साइंसी अक़ीदा बन गया था, मगर हालिया मुताले ने इस अक़ीदे को इल्मी हैसियत से शक के कटहरे में खड़ा कर दिया है। मिसाल के तौर पर, यह मालूम हुआ है कि ज़मीन की उम्र उस अंदाज़े से बहुत कम है, जो एवोल्यूशनरी तौर पर मुख़्तलिफ़ प्रजातियों को वजूद में लाने के लिए ज़रूरी है।

अब बॉटनी [6] के माहिरीन का क़ियास यह हो रहा है कि ज़मीन से बाहर कायनात के किसी मक़ाम पर इंसान जैसी तहज़ीब मौजूद है और उसने प्लानिंग के साथ ज़िंदगी का जरासीम (bacterium) ऊपर से ज़मीन पर भेजा है, मगर यहाँ भी एक रुकावट दर-पेश है। कायनाती वक़्त इतना काफ़ी नहीं कि उसके अंदर दो तहज़ीबें एक के बाद एक तरक़्क़ी कर सकें। एक ज़मीन पर, दूसरी किसी और सय्यारे में।

गोया इंसानी इल्म वहाँ पहुँच गया है, जहाँ उसके लिए इसके सिवा कोई चारा नहीं कि वह एक क़ादिर-ए-मुतलक़ के वजूद को तस्लीम कर ले।

---

[6] **बॉटनी** — साइंस की वह शाख़, जिसके तहत पेड़-पौधों का मुताला किया जाता है।

ज़मीन पर ज़िंदगी कैसे शुरू हुई, इसके बारे में हाल ही में एक चौंका देने वाला नज़रिया सामने आया है। इस नज़रिये को पेश करने वाले दो मुमताज़ मॉलिक्यूलर बायोलॉजिस्ट हैं। एक, नोबेल इनामयाफ़्ता साइंसदान फ़्रांसिस क्रिक, दूसरे लेस्ली ऑर्गेल। इस नज़रिये के मुताबिक़ ज़मीन पर ज़िंदगी का आग़ाज़ न तो ख़ुद-ब-ख़ुद हुआ और न इस तरह कि कुछ मिलियन साल पहले एक इब्तिदाई माद्दे से एक जिस्म-ए-हैवानी (organism) बना और उससे धीरे-धीरे एवोल्यूशन के ज़रिये ज़िंदगी की नस्लें वजूद में आईं, बल्कि ज़िंदगी एक ऐसे तजुर्बे का नतीजा थी, जो कुछ एलियन ने करोड़ों साल पहले प्लान की थी।

क्रिक और ऑर्गेल यह फ़र्ज़ करते हैं कि हमारे गैलेक्सी सिस्टम के दूसरे सय्यारों में तरक़्क़ीयाफ़्ता तहज़ीबें मौजूद हैं। उनके क़ियास के मुताबिक़ इसी क़िस्म के किसी सय्यारे के बाशिंदों ने कुछ हज़ार मिलियन साल पहले तय किया कि वे इस बात का तजुर्बा करें कि क्या उनके पड़ोसी सय्यारों में ज़िंदगी अपने लिए नया माहौल पैदा कर सकती है। चुनाँचे उन्होंने हमारी कहकशाँ के कुछ सय्यारों पर ज़िंदगी के जरासीम डाले। इसी क़दीम तजुर्बे का नतीजा हमारी मौजूदा तहज़ीब है।

उन्नीसवीं सदी में डार्विन के नज़रिये के बाद अहल-ए-मज़ाहिब का तख़्लीक़ का नज़रिया साइंसदानों के दरमियान ख़त्म हो गया था। इसके बाद साइंस-दाँ इस सवाल का जवाब मालूम करने में सरगर्दां थे कि ज़िंदगी शुरू किस तरह हुई। इस बहस के दौरान स्वीडन के केमिस्ट अरहेनियस ने उन्नीसवीं सदी के आख़िर में यह नज़रिया पेश किया कि कुछ बैक्टीरियाई अज्ज़ा किसी ऐसे सय्यारे से ज़मीन पर आ गए, जहाँ पहले से ज़िंदगी मौजूद थी और फिर धीरे-धीरे-एवोल्यूशन (gradual development) के ज़रिये मुख़्तलिफ़ नस्लों को वजूद में लाने का सबब बने। अरहेनियस ने इस तरीक़-ए-अमल को 'पेंस-परमिया' का नाम दिया। इस नज़रिये को इस तनक़ीद का सामना करना पड़ा कि

बैक्टीरिया दो सय्यारों के बीच सफ़र में ख़तरनाक रेडिएशन के मुकाबले में ज़िंदा नहीं रह सकता। लॉर्ड केल्विन ने इसका जवाब देते हुए कहा, "हो सकता है कि बैक्टीरिया किसी मीटीयोर (meteor) से चिपक गया हो और उस पर सवार होकर ज़मीन पर आया हो।"

अगरचे यह मुमकिन है कि बैक्टीरियाई अज्ज़ा मीटीयोर पर सवार होकर एक सय्यारे से दूसरे सय्यारे का सफ़र करें, ताहम पेंसपरमिया का नज़रिया कभी साइंसदानों के लिए काबिल-ए-क़ुबूल न हो सका था। इस नज़रिये का बुनियादी मुक़द्दमा यह है कि ज़िंदगी इससे पहले कहीं मौजूद थी, जबकि इस नज़रिये में इसका जवाब नहीं मिलता कि दूसरे सय्यारे पर ज़िंदगी कैसे वजूद में आई।

क्रिक और ऑर्गेल, यह मानते हुए कि बैक्टीरिया की इत्तिफ़ाक़ी हिजरत नामुमकिन है। वे कहते हैं कि उस वक़्त यह काबिल-ए-क़ुबूल हो जाता है, जबकि यह माना जाए कि इरादे के साथ किसी ने ज़िंदगी के जरासीम को ज़मीन पर भेजा हो। वे इस अमल को 'डाइरेक्टिड पेंसपरमिया' (Directed Panspermia) का नाम देते हैं।

इस नए नज़रिये के सबूत में क्रिक और ऑर्गेल बॉटनी के दो मसलों का हवाला देते हैं। उनमें से एक जेनेटिक कोड है। हर एक मौजूदा ज़माने में तस्लीम करता है कि ज़मीन पर ज़िंदगी की तमाम क़िस्मों के लिए सिर्फ़ एक कोड है। कोई बॉटनी का माहिर इस आलमगीरियत (Universality) की वजह नहीं बता सकता कि सबके लिए एक ही कोड क्यों है। ऑर्गेल और क्रिक कहते हैं कि इसकी वजह यह है कि ज़िंदगी का एक ही बीज था, जिससे ज़िंदगी शुरू हुई, इसलिए फ़ितरी तौर पर इस बीज का जेनेटिक कोड, जो करोड़ों साल पहले किसी दूसरे सय्यारे के बाशिंदों ने ज़मीन पर भेजा था, अपने आपको एक ही जेनेटिक कोड की शक्ल में पैदा करता रहा।

दूसरी चीज़ मोलिब्डेनम नामी धात का वह रोल है, जो जैविक प्रणाली में पाया जाता है। अक्सर एंज़ाइम अपना काम करने के लिए इसी के और सिर्फ़ इसी के मोहताज होते हैं। मोलिब्डेनम इतना ग़ैर-मामूली तौर पर अहम होने के बावजूद ज़मीन में पाई जाने वाली कुल धातुओं का सिर्फ़ 0.02 फ़ीसद (दस हज़ार में दो) है। दूसरी तरफ़ बाज़ ज़्यादा मिक़दार में पाई जाने वाली धातुओं मसलन क्रोमियम और निकेल, जो कि अपनी ख़ासियत में मोलिब्डेनम से बहुत समान होती है और ज़मीनी धातुओं का 0.2 और 3.16 फ़ीसद हैं, जैविक प्रणाली में बिल्कुल ही कोई अहमियत नहीं रखतीं। क्रिक और ऑर्गेल कहते हैं कि ज़मीन की जो केमिकल तरतीब (chemical composition) है, वह ज़मीन पर वजूद में आने वाली ज़िंदगियों की बनावट में दिखनी चाहिए थी और चूँकि ऐसा नहीं है, इसलिए मानना पड़ेगा कि ज़िंदगी कुछ मिलियन साल पहले ज़मीन पर बाहर से भेजी गई।

अगर डाइरेक्टिड पेंसपरमिया का नज़रिया मान लिया जाए तो इससे दो सवाल पैदा होते हैं—

(1) क्या कायनाती वक़्त इतना काफ़ी है कि इसके अंदर दो तहज़ीबें एक के बाद एक तरक़्क़ी कर सकें—एक ज़मीन पर और दूसरी किसी और सय्यारे में?

(2) क्या हयातयाती जरासीम को दो सय्यारों के बीच के फ़ासलों को पार करके एक जगह से दूसरी जगह ज़िंदा हालत में पहुँचाया जा सकता है?

क्रिक और ऑर्गेल का ख़याल है कि उनका नज़रिया क़ुबूलियत हासिल कर लेगा, अगर यह साबित हो सके कि वे अनासिर (elements) जो ज़मीनी ज़िंदगी के लिए ज़रूरी हैं, वह वही हैं, जो बाज़ क़िस्म के सितारों में उनके क़ियास के मुताबिक़ कसरत से पाए जाते हैं।

डार्विनिज़्म

आज के ज़माने की फ़िक्री ग़लतफ़हमी में से एक ग़लतफ़हमी वह है, जिसे 'डार्विनिज़्म' (Darwinism) कहा जाता है। इस फ़िक्र को मौजूदा ज़माने में बहुत ज़्यादा मक़बूलियत हासिल हुई है। इस नज़रिये के बारे में बेशुमार किताबें लिखी गई हैं और तमाम यूनिवर्सिटीज़ में इसे बाक़ाएदा सिलेबस में दाख़िल किया गया है, लेकिन इसका साइंटिफिक तज्ज़िया कीजिए तो वह एक ख़ूबसूरत ग़लतफ़हमी के सिवा और कुछ नहीं। डार्विनिज़्म के नज़रिये को दूसरे लफ़्ज़ों में ऑर्गेनिक एवोल्यूशन कहा जाता है।

इसका ख़ुलासा यह है कि बहुत पहले ज़िंदगी एक सादा ज़िंदगी (simple life forms) से शुरू हुई। फिर नस्ल-दर-नस्ल वह बढ़ती रही। हालात के असर से इसमें मुसलसल म्यूटेशन होता रहा। ये म्यूटेशन मुसलसल एवोल्यूशनरी सफ़र करते रहे। इस तरह एक इब्तिदाई प्रजाति मुख़्तलिफ़ प्रजातियों में तब्दील होती चली गई। इस लंबे अमल के दौरान एक फितरी क़ानून उसकी रहनुमाई करता रहा। यह फ़ितरी क़ानून डार्विन के अल्फ़ाज़ में नेचुरल सिलेक्शन था। इस नज़रिये में बुनियादी ख़ामी यह है कि वह दो समान प्रजाति का हवाला देता है और फिर यह दावा करता है कि लंबे ऑर्गेनिक एवोल्यूशन के ज़रिये एक प्रजाति दूसरी प्रजाति में तब्दील हो गई। मसलन बकरी धीरे-धीरे जिराफ़ बन गई वग़ैरह।

चार्ल्स डार्विन (वफ़ात:1882) का एवोल्यूशन का नज़रिया बुनियादी तौर पर नेचुरल सिलेक्शन के उसूल पर मबनी है। डार्विन ने और उसके साथियों ने अपनी किताबों के ज़रिये यह तास्सुर दिया कि एवोल्यूशन का यह नज़रिया एक साइंसी नज़रिया है, मगर साइंटिफिक परिभाषा के मुताबिक़ एवोल्यूशन का नज़रिया हरगिज़ साइंसी नज़रिया नहीं था, वह सिर्फ़ एक क़ियासी नज़रिये की हैसियत रखता था; मगर वक़्त के आम रुझान की वजह से ऑर्गेनिक एवोल्यूशन के इस नज़रिये

को आम मक़बूलियत हासिल हो गई। यह समझ लिया गया कि दुनिया में ज़िंदगी की वज़ाहत के लिए अब ख़ालिक़ को मानने की कोई ज़रूरत नहीं, ख़ालिक़ के वजूद को माने बग़ैर तमाम ज़िंदगी की वज़ाहत मुमकिन है।

यह नज़रिया बकरी और जिराफ़ को तो हमें दिखाता है, लेकिन वे दरमियानी नस्लें उसकी फ़ेहरिस्त में मौजूद नहीं हैं, जो तब्दीली के सफ़र को अमली तौर पर दिखाए। एवोल्यूशन के उसूल के वकील इन दरमियानी कड़ियों को 'मिसिंग लिंक' (Missing Link) कहते हैं, लेकिन यह मिसिंग लिंक सिर्फ़ एक क़ियासी लिंक है। मुशाहदे और तजुर्बे के ऐतबार से सिरे से उनका कोई वजूद नहीं।

मगर यह सिर्फ़ एक ग़लतफ़हमी थी। साइंस की मज़ीद दरियाफ़्तों ने यह साबित कर दिया कि एवोल्यूशन का यह नज़रिया इल्मी एतेबार से बिल्कुल बे-बुनियाद है। साइंस की जदीद दरयाफ़्त बताती है कि फ़ितरत में कामिल दर्जे का 'ज़हीन डिज़ाइन' (Intelligent Design) है। इस दरयाफ़्त ने इल्मी तौर पर एवोल्यूशन के उसूल का ख़ात्मा कर दिया है, क्योंकि ज़हीन डिज़ाइन एक 'ज़हीन डिज़ाइनर' (Intelligent Designer) की मौजूदगी को साबित करता है, वह बे-शुऊर क़िस्म के नेचुरल सिलेक्शन का नतीजा नहीं हो सकती।

इस नज़रिये की मक़बूलियत का राज़ सिर्फ़ यह था कि वह सेक्युलर आलिमों को एक कामचलाऊ नज़रिया दिखाई दिया, लेकिन कोई नज़रिया इस तरह के क़ियास से साबित नहीं होता। किसी नज़रिये को साबितशुदा नज़रिया बनाने के लिए ज़रूरी है कि उसकी पुश्त पर मालूम सबूत मौजूद हों, जो उसकी तस्दीक़ करते हों, लेकिन डार्विनिज़्म की हिमायत के लिए ऐसे सबूत मौजूद नहीं। मिसाल के तौर पर डार्विनिज़्म के मुताबिक़, ऑर्गेनिक एवोल्यूशन के लिए बहुत ज़्यादा लंबी मुद्दत दरकार है। साइंसी दरयाफ़्त के मुताबिक़ मौजूदा ज़मीन की उम्र उसके

मुक़ाबले में बहुत ज़्यादा कम है। ऐसी हालत में अगर मान लिया जाए कि ज़िंदगी का आग़ाज़ डार्विनी नज़रिये के मुताबिक़ पेश आया हो, तो वह मौजूदा महदूद ज़मीन के ऊपर कभी शुरू नहीं हो सकता। (तफ़्सील के लिए देखिए लेखक की किताब : 'मज़हब और साइंस' और 'धर्म और आधुनिक चुनौती')

ज़मीन की महदूद उम्र के बारे में जब साइंस की दरयाफ़्त सामने आई तो उसके बाद एवोल्यूशन के वकीलों ने यह कहना शुरू किया कि ज़िंदगी बाहर किसी और सय्यारे पर पैदा हुई, फिर वहाँ से सफ़र करके ज़मीन पर आई। इस एवोल्यूशन के उसूल को उन्होंने ख़याली तौर पर पेंसपरमिया का नाम दिया। अब दूरबीनों और ख़लाई सफ़रों के ज़रिये ख़ला में कुछ ख़याली सय्यारों की दरयाफ़्त शुरू हुई, मगर बेशुमार कोशिशों के बावजूद अब तक यह ख़याली सय्यारा दरयाफ़्त न हो सका।

एवोल्यूशन का सबूत नहीं

हालिया तहक़ीक़ात ने एवोल्यूशन के तसव्वुर को इल्मी तौर पर बे-बुनियाद साबित कर दिया है। मसलन फ़ॉसिल्स के मुताले से यह मालूम हुआ है कि एवोल्यूशन का यह नज़रिया मुशाहिदात के मुताबिक़ नहीं है कि ज़िंदगी की एक प्रजाति करोड़ों साल में हल्की-हल्की तब्दीली से दूसरी प्रजाति की सूरत इख़्तियार कर लेती है। मसलन डार्विनिज़्म में यह फ़र्ज़ किया गया था कि लोमड़ी की नस्लों में रफ़्ता-रफ़्ता तब्दीलियाँ हुईं, जिसके नतीजे में 60 मिलियन साल के बाद लोमड़ी ने घोड़े की सूरत इख़्तियार कर ली, मगर ताज़ा दरियाफ़्तें बताती हैं कि नस्लों में तब्दीली (अगर उसे तब्दीली का नाम दिया जाए) बिल्कुल अचानक होती है यानी लोमड़ी बिल्कुल अचानक एक ही नस्ल में घोड़ा बन

जाती है। ज़मीन की तहों में क़दीम ज़माने के ज़िंदगी के आसार जो पथरीली हड्डियों या ढाँचों की सूरत में दफ़न हैं, वे एवोल्यूशन के नज़रिये की पूरी तरह तस्दीक़ नहीं करते।

अमेरिका की हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के प्रोफ़ेसर स्टीफ़न जे. गोल्ड ने नए सुबूतों का हवाला देते हुए लिखा है कि फ़ॉसिल्स के रिकॉर्ड के मुताबिक़ प्रजातियाँ (species) करोड़ों साल तक बग़ैर बदले हुए एक हालत पर बाक़ी रहतीं हैं और फिर अचानक एक प्रजाति ग़ायब होकर दूसरी प्रजाति सामने आ जाती है, जो बुनियादी तौर पर पहली से मुख़्तलिफ़, मगर वाज़ेह तौर पर पहली के जैसे होती है।

For millions of years species remain unchanged in the fossil record, and then they abruptly disappear to be replaced. (The Sunday Times, London, 8 March, 1981)

फ़ॉसिल्स के मुताले में एक नस्ल करोड़ों साल तक बिल्कुल यकसाँ हालत में नज़र आती है। इसके बाद ऐसे फ़ॉसिल्स मिलते हैं, जो बताते हैं कि अचानक एक प्रजाति सामने आ गई। इस तरह दर्जा ब-दर्जा तब्दीली का नज़रिया सरासर झूठा साबित हो जाता है। ताहम फ़ॉसिल्स के मुताले से जो बात मालूम होती है, वह सिर्फ़ एक क़िस्म के जानदार के फ़ॉसिल ढाँचे के बाद अचानक दूसरी क़िस्म के जानदार के फ़ॉसिल ढाँचे का मिलना है। यह सवाल अभी ब-दस्तूर हल-तलब है कि नई नस्ल पिछली नस्ल से निकली या आज़ादाना तौर पर वजूद में आई, जिस तरह ज़मीन का पहला जानदार आज़ादाना तौर पर वजूद में आया था।

एवोल्यूशन के हिमायतियों का ख़याल था कि पहले जानदार के मुताल्लिक़ अगर यह मान लिया जाए कि वह अचानक पैदा हो गया तो दूसरे तमाम क़िस्म के जानदारों की पैदाइश एवोल्यूशन के तौर

पर साबित हो जाती है, मगर अब हक़ाइक़ यह मानने पर मजबूर कर रहे हैं कि जिस तरह पहला जानदार 'अचानक' पैदा हुआ, उसी तरह जानदारों की दूसरी तमाम क़िस्में भी 'अचानक' पैदा हुई हैं। एवोल्यूशन का नज़रिया जिस तरह पहले जानदार की तशरीह में नाकाम था, उसी तरह वह बाद के जानदारों की तशरीह में भी नाकाम हो रहा है।

एवोल्यूशन के उसूल की सच्चाई पर मौजूदा ज़माने के 'साइंस-दाँ' रज़ामंद हो चुके हैं। एवोल्यूशन का तसव्वुर एक तरफ़ तमाम इल्मी शोबों पर छाता जा रहा है। हर वह मसला जिसे समझने के लिए ख़ुदा की ज़रूरत थी, उसकी जगह बे-तकल्लुफ़ एवोल्यूशन का एक ख़ूबसूरत बुत बनाकर रख दिया गया है, मगर दूसरी तरफ़ ऑर्गेनिक एवोल्यूशन का नज़रिया, जिससे तमाम एवोल्यूशन के तसव्वुरात निकाले गए हैं, अब तक बे-दलील है, यहाँ तक कि कुछ साइंसदानों ने साफ़ तौर पर कह दिया है कि इस तसव्वुर को हम सिर्फ़ इसलिए मानते हैं कि इसका कोई बदल हमारे पास मौजूद नहीं है। सर आर्थर कीथ (1866-1955) ने 1953 में कहा था—

"Evolution is unproved and unprovable. We believe it only because the only alternative is special creation and that is unthinkable."

"एवोल्यूशन एक ग़ैर-साबितशुदा नज़रिया है और वह साबित भी नहीं किया जा सकता। हम इस पर सिर्फ़ इसलिए यक़ीन करते हैं कि इसका वाहिद बदल तख़्लीक़ का अक़ीदा है, जो साइंसी तौर पर ना-क़ाबिल-ए-फ़हम है।" (Islamic Thought, Dec. 1961)

गोया साइंस-दाँ एवोल्यूशन के नज़रिये की सच्चाई पर सिर्फ़ इसलिए मुत्तफ़िक़ हो गए हैं कि अगर वे छोड़ दें तो लाज़िमी तौर पर उन्हें ख़ुदा के तसव्वुर पर ईमान लाना पड़ेगा।

तकमील-ए-दीन की तरफ़ उम्मत का सफ़र

पैग़ंबर-ए-इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपने आख़िरी ज़माने में अपनी उम्मत को एक जामे नसीहत इन अल्फ़ाज़ में की थी—

تَرَكْتُ فِيكُمْ أَمْرَيْنِ، لَنْ تَضِلُّوا مَا تَمَسَّكْتُمْ بِهِمَا: كِتَابَ اللَّهِ وَسُنَّةَ نَبِيِّهِ

"मैं तुम्हारे दरमियान दो चीज़ें छोड़ रहा हूँ, तुम हरगिज़ गुमराह न होगे जब तक तुम इन दोनों को पकड़े रहोगे— अल्लाह की किताब और उसके नबी की सुन्नत।" (मुवत्ता इमाम मालिक, हदीस नं० 2618)

इस हदीस से मालूम होता है कि रसूलुल्लाह ने उम्मत को जो तरीक़ा बताया था, वह यह था कि उम्मत मसाइल में उलझने से बचे और मारिफ़त और दावत पर फ़ोकस करे। इसी में उम्मत के लिए कामयाबी का राज़ छिपा है। इंसान मसाइल में उलझने से मनफ़ी सोच (negative thinking) का शिकार होता है, जो कि तमाम ख़राबियों की जड़ है। इसीलिए पैग़ंबर-ए-इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने बार-बार यह नसीहत की थी—

إِذَا أُصِيبَ أَحَدُكُمْ بِمُصِيبَةٍ فَلْيَذْكُرْ مُصِيبَتَهُ بِي فَلْيُعَزِّهِ ذَلِكَ عَنْ مُصِيبَتِهِ

"जब तुममें से किसी पर मुसीबत आए तो अपनी मुसीबत के साथ वह मेरी मुसीबत को याद करे। वह उसे उसकी मुसीबत के मौक़े पर तसल्ली देगी।" (मुसन्नफ़ अबदुर्रज़्ज़ाक़, हदीस नं० 6700)

यह सादा अल्फ़ाज़ में सिर्फ़ पैग़ंबर-ए-इस्लाम की मुसीबत को याद करना नहीं है, बल्कि यह सबक़ हासिल करना है कि पैग़ंबर-ए-इस्लाम ने जिस तरह मुसीबत (मसाइल) को इग्नोर करके मारिफ़त और दावत का मिशन अंजाम दिया, उसी तरह आज भी मारिफ़त और दावत का मिशन अंजाम देना है।

मौजूदा ज़माने में मारिफ़त और दावत के ज़राए का धमाका हो चुका है। इस हक़ीक़त की तरफ़ क़ुरआन में बतौर पेशीनगोई इन अल्फ़ाज़ में इशारा किया गया था—

سَنُرِيهِمْ آيَاتِنَا فِي الْآفَاقِ وَفِي أَنْفُسِهِمْ حَتَّى يَتَبَيَّنَ لَهُمْ أَنَّهُ الْحَقّ

"अन-क़रीब (बहुत जल्द) हम उन्हें अपनी निशानियाँ दिखाएँगे—कायनात में भी और ख़ुद उनके अंदर भी, यहाँ तक कि उन पर ज़ाहिर हो जाएगा कि यह हक़ है।" (41:53)

इसी तरह क़ुरआन में एक दूसरे मक़ाम पर यह आया है—

وَقُلِ ٱلْحَمْدُ لِلَّهِ سَيُرِيكُمْ ءَايَٰتِهِۦ فَتَعْرِفُونَهَا

"और कहो कि सब तारीफ़ अल्लाह के लिए है, वह बहुत जल्द तुम्हें अपनी निशानियाँ दिखाएगा तो तुम उन्हें पहचान लोगे।" (27:93)

इन आयात से मालूम होता है कि रसूलुल्लाह के आने का मक़सद फ़िकरी मवाक़ो का आम हो जाना था यानी पैग़ंबर-ए-इस्लाम के आने के बाद एक नए प्रोसेस का आग़ाज़ हुआ, कायनात और ख़ुद इंसान के अंदर— 'आफ़ाक़-ओ-अन्फ़ुस' की आयात के ज़रिये दीन-ए-हक़ का इज़हार, लेकिन बाद के मुस्लिम अहल-ए-इल्म, सारे-के-सारे, मवाक़े को फ़िक्री ऐतबार से इस्तेमाल करने के बजाय सियासी तहफ़्फ़ुज़ और क़िताल जैसी बातों में लग गए। इस मामले में किसी आलिम का इस्तिसना (exception) नहीं है। अफ़ग़ानिस्तान में तालिबान का सियासी ज़हूर इसी सोच का एक मुज़ाहिरा है। ये सब लोग जिहाद और सियासत की लाइन से सोचते रहे। इसके मुक़ाबले में ख़ुदा की मारिफ़त की निशानियों के ज़हूर की पेशीनगोई जो क़ुरआन में की गई थी (फ़ुस्सिलत, 41:53), इस पहलू से वे सोच न सके।

तज़ईन या डिस्ट्रैक्शन

ऐसा क्यों हुआ कि उम्मत का फ़ोकस अस्ल पहलू से हट गया। इसे समझने के लिए इब्लीस के मामले को समझना होगा।

क़ुरआन से मालूम होता है कि अल्लाह ने जब पहले इंसान आदम को पैदा किया और उस वक़्त की मौजूद मख़्लूक़ फ़रिश्ते और इब्लीस के सामने उसे पेश किया तो शैतान ने नाराज़गी के साथ कहा था—

رَبِّ بِمَا أَغْوَيْتَنِي لَأُزَيِّنَنَّ لَهُمْ فِي الْأَرْضِ وَلَأُغْوِيَنَّهُمْ أَجْمَعِينَ

"इब्लीस ने कहा, 'ऐ मेरे रब, जैसा तूने मुझे गुमराह किया है, उसी तरह मैं ज़मीन में उनके लिए तज़ईन (beautify) करूँगा और सबको गुमराह कर दूँगा।' " (15:39)

तज़ईन शैतान की सबसे ख़तरनाक चाल है। इस आयत में 'तज़ईन' का मतलब कुछ मुफ़स्सिरीन ने इन अल्फ़ाज़ में बयान किया है—

لأشغلنهم بزينة الدنيا عن فعل الطاعة

"मैं ज़रूर उन्हें इताअत के अमल से हटाकर दुनिया के फ़रेब में मशग़ूल कर दूँगा।" (तफ़सीर अल-मावर्दी, V. 3, p.160)

لأزيّنَنَّ لهم الباطلَ حتى يقعوا فيه

"मैं उनके लिए बे-नतीजा बातों को ख़ूबसूरत करके दिखाऊँगा, यहाँ तक कि वे उसका शिकार हो जाएँगे।" (ज़ाद अल-मसीर, V.2, p.534)

इन तफ़सीरों की रोशनी में शैतान का काम क्या हो सकता है?

शैतान की चालों में एक चाल है— 'तस्ग़ीर-उल-अज़ीम और तकबीर-उल-सग़ीर' यानी बड़े को छोटा करना और छोटे को बड़ा। ग़ैर-हक़ीक़ी बातों को हक़ीक़ी बनाकर पेश करना। ग़ैर-मुताल्लिक़ बातों को मुताल्लिक़ और अहम बनाकर पेश करना और मुताल्लिक़ या अहमतरीन बातों को ग़ैर-मुताल्लिक़ बनाकर पेश करना वग़ैरह।

नया दौर मवाक़े के इन्फ़िजार (opportunity explosion) का

दौर है, लेकिन क़ानून-ए-फ़ितरत के मुताबिक़, इस दौर में वही कामयाब हो सकता है, जो मसाइल को इग्नोर करके मवाक़े को इस्तेमाल करने की हकीमाना प्लानिंग करे।

मसाइल को इग्नोर न करना क्या है? वह यह है कि आप शिकायती ज़ेहन के साथ ज़िंदगी गुज़ारें— मग़रिबी क़ौम से शिकायत, हिंदुओं से शिकायत, पड़ोसियों से शिकायत, ऑफ़िस के साथियों से शिकायत, उन ज़मानी तब्दीलियों से शिकायत जो आपकी समाजी रिवायत के ख़िलाफ़ हों वग़ैरह।

इसके बर-अक्स मवाक़े को इस्तेमाल करना क्या है? वह यह है कि आप मसाइल के बावजूद यह देखें कि इसमें कोई ऐसा मौक़ा है, जिसे इस्तेमाल करके कामयाबी का रास्ता इख़्तियार किया जा सके। इसका अमली नमूना हज़रत उमर के यहाँ मिलता है। एक मर्तबा सहाबी-ए-रसूल हुज़ैफ़ा ने ख़लीफ़ा-ए-सानी उमर से कहा—

إِنَّك تستعين بِالرجلِ الَّذِي فِيهِ وَبَعْضهمْ يرويهِ:بِالرجلِ الْفَاجِر
فَقَالَ عمر:إِنِّي أستعمله لأستعين بقوّته ثمَّ أكون على قَفّانه

“तुम ऐसे आदमी से मदद तलब करते हो, जो गुनाहगार है। उमर ने कहा कि मैं उसे ज़िम्मेदारी देता हूँ, ताकि उसकी क़ुव्वत से मदद हासिल करूँ, फिर मैं उसकी निगरानी कर रहा हूँ (ताकि वह कोई ग़लती न करे।)” (ग़रीब-उल-हदीस लिल-क़ासिम बिन सल्लाम, V. 3, p. 239)

यही है मसाइल को इग्नोर करके मवाक़े को इस्तेमाल करना यानी एक इंसान के अंदर बुराई है, इसके साथ उसमें इंतिज़ामी (managerial) सलाहियत भी है तो हज़रत उमर ने ऐसे इंसान की बुराई को नज़रअंदाज किया और उसकी सलाहियत से फ़ायदा उठाया। ऐसा रसूलुल्लाह की तर्बियत का नतीजा था। आपने भी हिजरत-ए-मदीना के मौक़े पर एक मुशरिक अब्दुल्लाह बिन ओरैकित को अपना रहनुमा बनाया था।

(सीरत इब्ने-हिशाम, V.1, p.488)

मगर मौजूदा ज़माने के मुसलमान 'अन-अवैल्ड अपॉर्चुनिटी' यानी मवाकों को खोने का केस बन गए हैं। मौजूदा ज़माने में मग़रिबी तहज़ीब ने जो साइंसी खोजें की हैं, उससे न सिर्फ़ मादी ईजादात, जैसे— प्रिंटिंग प्रेस, कंप्यूटर, इंटरनेट वग़ैरह की सतह पर ख़ुदा के दीन को मदद मिली है, बल्कि फ़िक्री सतह पर भी मारिफ़त[7] की ला-महदूद दुनिया डिस्कवर हो गई है, जैसे— कायनात की वुसअत, इंसानी जिस्म की बनावट का मुताला, क्वांटम फिज़िक्स वग़ैरह। ये दरियाफ़्तें ला-महदूद सतह पर इंसान के लिए मारिफ़त का सामान मुहय्या कराती हैं। इससे न सिर्फ़ दुनियावी सतह पर इंसान को मदद मिली, बल्कि मानवी सतह पर भी इंसान के लिए इंटेलेक्चुअल डेवलपमेंट का सामान फ़राहम हुआ है।

ये साइंसी दरियाफ़्तें मग़रिबी लोगों के ज़रिये ज़हूर में आईं, लेकिन मौजूदा दौर के तमाम मुस्लिम लीडर सियासी मैदान में शिकस्त की वजह से उनसे दुश्मनी करने लगे। हालाँकि सियासी मैदान एक महदूद मैदान था, जबकि ख़ुदा की मारिफ़त और दीन की मदद का मैदान एक ला-महदूद मैदान था, लेकिन शैतान ने ब-ज़रिया 'तज़ईन' यह किया कि मुस्लिम लीडरों के सामने सियासी मामले को अज़ीम बनाकर पेश किया और ख़ुदा की मारिफ़त और दावत के मैदान को ग़ैर-हक़ीक़ी बनाकर पेश किया। चुनाँचे मुस्लिम दुनिया सत्रहवीं सदी से लेकर अब तक इसी तज़ईन में फँसी हुई है और इससे बाहर नहीं निकल पाई है।

एक हदीस-ए-रसूल इन अल्फ़ाज़ आई है—

إِنَّ اللَّهَ لَيُؤَيِّدُ هَذَا الدِّينَ بِالرَّجُلِ الفَاجِرِ

"बे-शक अल्लाह ताला फ़ाजिर इंसान के ज़रिये इस दीन की ताईद करेगा।" (सहीह-अल-बुख़ारी, हदीस नंबर 3062)

---

[7] **मारिफ़त**— ख़ालिक़ की तख़्लीक़ात में ग़ौर-ओ-फ़िक्र के ज़रिये ख़ालिक़ की ख़ुसूसियात की पहचान।

एक और रिवायत में इसे 'ग़ैर-अहल-ए-दीन' के अल्फ़ाज़ में बयान किया गया है।

إِنَّ اللهَ عَزَّ وَجَلَّ لَيُؤَيِّدُ الْإِسْلَامَ بِرِجَالٍ مَا هُمْ مِنْ أَهْلِه

"बे-शक अल्लाह ताला इस दीन की ताईद उन लोगों के ज़रिये करेगा, जो ग़ैर-अहल-ए-दीन होंगे।"

(अल-मुजम अल-कबीर लिल-तबरानी, हदीस नं० 14640)

यह बहुत अहम पेशीनगोई है। इसका मतलब यह है कि बाद के ज़माने में, जबकि इस्लाम अजनबी बन जाएगा, उस वक़्त यही बे-दीन और ग़ैर-अहल-ए-दीन ख़ुदाई दीन के मददगार साबित होंगे, ख़्वाह बिल-वास्ता अंदाज़ में हो या बिला-वास्ता अंदाज़ में (directly or indirectly)। यही लोग होंगे जिनके ज़रिये इस्लाम का कलिमा ज़मीन पर मौजूद हर छोटे-बड़े घर में दाख़िल होगा। ग़ालिबन इसी हक़ीक़त की तरफ़ रसूलुल्लाह ने इन अल्फ़ाज़ में इशारा किया है—

قَوَامُ أُمَّتِي بِشِرَارِهَا

"मेरी उम्मत का मामला उसके बुरे लोगों के ज़रिये दुरुस्त रहेगा।"

(मुसनद अहमद, हदीस नंबर 21985)

इन तमाम आयात-ओ-अहादीस को आज के हवाले में देखा जाए तो मौजूदा दौर के ऐतबार से उनका मतलब एक जुमले में यह होगा कि सियासी मसाइल को नज़रअंदाज करो और मवाक़े को इस्तेमाल करो।

Ignore the political problems, avail the opportunities

क़दीम ज़माने की तरह मौजूदा ज़माने में भी मसाइल हैं। कोई ज़माना मसाइल से ख़ाली नहीं होता है, ख़्वाह वह माज़ी हो या हाल या मुस्तक़बिल। यह क़ानून-ए-फ़ितरत है। पैग़ंबर-ए-इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज़माने में भी मसाइल थे, मगर आपने मसाइलों से

बिना टकराए ,मसाइलों के दरमियान मौजूद मवाक़ों को दावती मिशन के लिए इस्तेमाल किया। क्योंकि 'स्टेटस-क़ो'[8] (status quo) को बदलना बड़ी बुराई (greater evil) है और स्टेटस-क़ो को इग्नोर करके अपना मिशन शुरू करना छोटी बुराई (lesser evil) है। पैग़ंबर-ए-इस्लाम ने यही किया। मसलन यह कि जब आपने दावती काम शुरू किया तो काबा में बुत थे, मगर आपने उन्हें नज़रअंदाज किया और बुतों के लिए आने वालों को पुरअमन अंदाज़ में तौहीद का पैग़ाम पहुँचाया। चुनाँचे यही लोग हैं, जिन्होंने शिर्क को छोड़ दिया और एक दिन आपके साथी बन गए। यही तारीख़ आज भी दोहराई जा सकती है।

फ़र्द और समाज

इस दुनिया में मेयारी (ideal) फ़र्द का बनना मुमकिन है, लेकिन मेयारी समाज का वजूद में आना मुमकिन नहीं। कोई आदमी अपने ज़ाती फ़ैसले के तहत अपनी शख़्सियत की तामीर करता है। एक इंसान के बनने के लिए यह काफ़ी है कि उसके अंदर इन्फ़िरादी क़ुव्वत-ए-इरादी (will power) पैदा हो जाए, लेकिन पूरे समाज के साथ ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि क़ुव्वत-ए-इरादी एक फ़र्द के अंदर होती है, पूरे समाज के अंदर इज्तिमाई क़ुव्वत-ए-इरादी (collective will) सिर्फ़ एक ख़याली तसव्वुर है, अमली तौर पर इसका कोई वजूद नहीं। यही वजह है कि तारीख़ में बार-बार ऐसे अफ़राद पैदा हुए, जो अपनी ज़ात के ऐतबार से मेयारी किरदार के हामिल थे, मगर ऐसा कभी नहीं हुआ कि पूरा समाज या पूरा इज्तिमाई निज़ाम अपने किरदार के ऐतबार से

[8] **स्टेटस-क़ो**— सामाजिक, मज़हबी या पॉलिटिकल सूरतेहाल।

मेयारी समाज या मेयारी निज़ाम बन जाए। ख़ुदा के तख़्लीक़ी प्लान के मुताबिक़ ऐसा होना मुमकिन नहीं।

क़यामत की तरफ़

इंसान एक ऐसी मख़्लूक़ है जिसे ज़िंदगी गुज़ारने के लिए बहुत-सी चीज़ों की ज़रूरत होती है। मसलन पानी और रोशनी और ऑक्सीजन वग़ैरह। इस तरह के बेशुमार आइटम हैं, जो दुनिया में इंसान के ज़िंदा रहने के लिए लाज़िमी तौर पर ज़रूरी हैं। यह सामान-ए-हयात हमारी दुनिया में भरपूर तौर पर बग़ैर माँगे हुए मौजूद है। सामान-ए-हयात को 'लाइफ़ सपोर्ट सिस्टम' (life-support system) कहा जा सकता है। यह 'लाइफ़ सपोर्ट सिस्टम' इतना मुकम्मल है कि वह इंसान की हर छोटी-बड़ी ज़रूरत को निहायत आला सूरत में पूरा कर रहा है। ज़मीन से लेकर सूरज तक पूरी दुनिया ग़ैर-मामूली तौर पर इंसान की ख़िदमत में लगी हुई है। इंसान को इसकी कोई क़ीमत अदा करनी नहीं पड़ती है।

मगर इक्कीसवीं सदी के आग़ाज़ में एक ना-पसंदीदा चीज़ का इज़हार हुआ जिसको 'ग्लोबल वार्मिंग'[9] कहा जाता है। ग्लोबल वार्मिंग दूसरे अल्फ़ाज़ में, ज़मीन के लाईफ़ सपोर्ट सिस्टम के ख़ात्मे की शुरुआत है। इंडस्ट्रियल सरगर्मियों से पैदा होने वाले पॉल्यूशन ने ऐसे हालात पैदा किए, जिससे यह दुनिया इंसान के लिए रहने लायक़ ही नहीं रहेगी। मौजूदा ज़माने में ग्लोबल वार्मिंग के बारे में मुसलसल ख़बरें आ रही हैं जो क़यामत की पेशीनगोई की तस्दीक़ करने वाली हैं।

[9] **ग्लोबल वार्मिंग** — पॉल्यूशन से दुनिया का औसतन तापमान बढ़ा है जिससे दुनिया में बड़े पैमाने पर मौसमियती तब्दीली हुई है, इसे क्लाइमेट चेंज भी कहा जाता है।

सितंबर 2021 में, बी.बी.सी. अंग्रेज़ी में मुसलसल एक खबर आ रही थी, एक दिन यह ख़बर नीचे लिखे हुए टाइटल से नक़ल की गई थी—Volcano on Canary Island La Palma erupts, spewing ash and lava into national park.

दूसरी न्यूज़ वेबसाइट ने इन अल्फ़ाज़ में ला-पाल्मा की तबाही की ख़बर दी है—

La Palma Volcano Reaches Atlantic Ocean, Leaves Trail of Destruction Behind. (New18)

Bright lava flows, smoke pours from La Palma volcano eruption. (Sky News)

इन तमाम ख़बरों का ख़ुलासा यह है कि स्पेन के जज़ीरा ला-पाल्मा में ला-कुंब्रे वीजा नामी वॉल्केनो से राख़, धुआँ और लावा के निकलने का सिलसिला जारी है। इंतिहाई गर्म लावा ने मकानात और जंगलाती इलाक़े को जला डाला है। अंदाज़े के मुताबिक़, लावा के रास्ते में आने वाले 1200 से ज़्यादा घर तबाह हो चुके हैं और 6 हज़ार से ज़्यादा अफ़राद को महफ़ूज़ मक़ाम पर पहुँचाया गया है। ला-पाल्मा में वॉल्केनो से लावा का निकलना 19 सितंबर से शुरू हुआ था। धमाके से पहले 4.2 की शिद्दत का ज़लज़ला रिकॉर्ड किया गया। हज़ारों छोटे ज़लज़ले के एक हफ़्ते बाद कुंब्रे वीजा ज्वालामुखी पहाड़ से सफ़ेद धुएँ के बड़े-बड़े बादल निकले। इससे अब तक 180 हेक्टेयर का इलाक़ा जलकर राख़ हो चुका है। कई इलाक़ों पर स्याह राख़ की मोटी तह जम चुकी है। पिघले हुए लावा का तक़रीबन 6 मीटर ऊँचा न रुकने वाला बहाव समंदर की तरफ़ जा रहा है। माहिरीन ने यह इम्कान भी ज़ाहिर किया है कि मुम्किना तौर पर यह 17 से 20 मिलियन क्यूबिक मीटर लावा समंदर तक पहुँचेगा। जब लावा समंदर में गिरेगा तो पानी के

मिलाप से शोर बुलंद होने के साथ-साथ फ़िज़ा में इंतिहाई ज़हरीली और तेज़ाबी गैसें बुलंद होंगी। साइंसदानों का कहना है कि इससे ज़मीन में मज़ीद नई दरारें उभर सकती हैं।

इस क़िस्म की सूरत-ए-हाल ज़मीन के ऊपर 'इकोलॉजिकल सिस्टम'[10] के लिए संगीन ख़तरा पैदा करती जा रही है। तमाम इंसानी कोशिशों के बावजूद कोई भी इंसानी हल ग्लोबल वार्मिंग का मुक़ाबला करने में कामयाब नहीं हो पा रहा है। ज़मीन के इकोलॉजिकल सिस्टम की सूरत-ए-हाल दिन-ब-दिन पेचीदा होती जा रही है। 'वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गेनाइज़ेशन' (W.H.O.) के मुताबिक़, पॉल्यूशन से होने वाले नुक़सान का जो अंदाज़ा माज़ी में किया गया था, अब उससे कहीं ज़्यादा नुक़सान का ख़तरा बढ़ गया है। इसलिए बिल-वास्ता या बराह-ए-रास्त तौर पर (indirectly or directly) इसका असर तमाम इंसानी आबादियों तक पहुँच रहा है।

मीडिया में मुसलसल ये ख़बरें आ रही हैं कि तमाम दुनिया के साइंसदानों ने गहरे रिसर्च के बाद यह पाया है कि हमारी ज़मीन में मौसमियाती तब्दीली (climate change) इतने ख़तरनाक हद तक पहुँच गई है कि अब वह नाक़ाबिल-ए-तब्दील (irreversible) हो चुकी है। इकोलॉजी का मामला इतना बिगड़ चुका है कि पॉल्यूशन फैलाने वाली सरगर्मियों को रोक भी दें, तब भी सिर्फ़ क़ुदरती अमल से हवा में काफ़ी ज़्यादा क़ुदरती कार्बोनिक एरोसोल यानी माइक्रोस्कोपिक लिक्विड ड्रॉपलेट्स बनती हैं, जिनसे इंसानी सेहत पर संगीन असरात होते हैं।

---

[10] **इकोलॉजिकल सिस्टम** — पौधों, जानवरों और छोटे जानदारों के एक समूह जो एक ही इलाक़े या माहौल में रहते हैं, खातें हैं, प्रजनन करते हैं और आपस में इंटरेक्ट करते हैं।

ग्लोबल वार्मिंग और इसके मुताल्लिक़ पहलुओं पर मौजूदा ज़माने में वसी पैमाने पर मुताला किया जा रहा है। इस मुताले का एक हिस्सा यह है कि ज़मीन के नॉर्थ पोल और साउथ पोल में बर्फ़ के बड़े-बड़े पहाड़ हैं। इन पहाड़ों के नीचे बड़े-बड़े ज्वालामुखी छिपे हुए हैं। ये ज्वालामुखी दबी हुई ऊर्जा के भारी ज़ख़ीरे की हैसियत रखते हैं। इनके ऊपर बर्फ़ के पहाड़ गोया कि क़ुदरत के ढक्कन हैं, जो इन ज्वालामुखियों को फटकर बाहर आने से रोके हुए हैं। ग्लोबल वार्मिंग के नतीजे में नॉर्थ पोल और साउथ पोल के ये बर्फ़ानी ढक्कन तेज़ी से पिघल रहे हैं। इस तरह शदीद तौर पर यह ख़तरा पैदा हो गया है कि नॉर्थ पोल और साउथ पोल का बर्फ़ानी ढक्कन बहुत जल्द पिघलकर ख़त्म हो जाए और उनके अंदर छिपे हुए ज्वालामुखी फटकर आग और लावा की सूरत में बाहर आ जाएँ।

मसलन ला-पाल्मा का लावा अटलांटिक तक पहुँचा तो वहाँ लावा के पानी में मिलने से धमाके शुरू हो गए हैं और ज़हरीली गैस के बादल फ़िज़ा में फैल रहे हैं। लावा का मुताला करने वाले साइंसदानों ने उसे 1000 डिग्री सेंटीग्रेड पर नापा। इस वक़्त यह ज्वालामुखी एक दिन में 8,000 से 10,500 टन सल्फर डाइऑक्साइड गैस पैदा कर रहा है। सल्फर डाइऑक्साइड अवाम की सेहत के लिए बहुत ही संगीन मसला है। यह तेज़ाबी बारिश और पॉल्यूशन का सबब भी बन सकती है। यही सब वे चीज़ें है, जिन्हें लाइफ़ सपोर्ट सिस्टम के ख़ात्मे की तरफ़ सफ़र कहा जा सकता है।

पैग़ंबर-ए-इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने क़यामत के ताल्लुक़ से मुख़्तलिफ़ पेशीनगोइयाँ की हैं। उनमें मौसम की तब्दीली के ततालुक़ से चंद ये हैं—

धुँआ, ज़मीन का धँसना या लैंडस्लाइड, सूरज का मग़रिब से निकलना (सहीह मुस्लिम, हदीस नं० 2901), ज़लज़लों की कसरत

(सहीह अल-बुख़ारी, हदीस नं० 7121) वग़ैरह। हालात बताते हैं कि इन बातों की इब्तिदा हो चुकी है। ख़बरों के मुताबिक़, एक मक़ामी बाशिंदे ने ला-पाल्मा की तबाही को इन अल्फ़ाज़ में बयान किया है कि हर चीज़ तबाह-ओ-बरबाद हो गई।

Everything is destroyed

ज़मीन के एक छोटे हिस्से में होने वाली फ़ितरी तबाही (calamity) गोया इस बात की तरफ़ इशारा कर रही है कि एक दिन आने वाला है, जबकि ज़मीन मुकम्मल तौर पर तबाह कर दी जाए। तबाही के ये छोटे-छोटे फ़ितरी वाक़िआत गोया मौजूदा दुनिया के ख़ात्मे के आग़ाज़ का ऐलान है यानी बहुत जल्द वह वक़्त आने वाला है, जबकि मौजूदा दुनिया का ख़ात्मा हो जाए और एक नई दुनिया बने, जहाँ ख़ुदा का अदल क़ायम हो। जहाँ नेक लोगों को जन्नत में दाख़िला मिले और बुरे लोगों को कायनाती कूड़ेख़ाने में डाल दिया जाए। अब आख़िरी वक़्त आ गया है कि हर ज़िंदा औरत और मर्द उस आने वाले इंसाफ़ के दिन की तैयारी करे, जो बहरहाल आकर रहेगा और जो आने के बाद फिर वापस जाने वाला नहीं।

क़ुरआन के मुताबिक़ बड़ा अज़ाब यानी 'अल-अज़ाब-उल-अकबर' वह है, जो क़यामत के वक़्त सूर-ए-इस्राफ़ील के बाद आएगा, लेकिन इससे पहले छोटे-छोटे अलामती अज़ाब यानी 'अल-अज़ाबुल अदना' आएँगे, ताकि लोग होशियार होकर अपनी इस्लाह कर लें (अस-सजदा, 32:21)। ग्लोबल वार्मिंग, मीठे पानी की क़िल्लत, ज़लज़लों की कसरत, वॉल्केनो का कसरत से फटना, समंदरी तूफ़ान और सैलाब वग़ैरह इसी क़िस्म के छोटे अज़ाब हैं। हालात बताते हैं कि अब आख़िरी वक़्त आ गया है कि इंसान होशियार हो जाए, इससे पहले कि वह वक़्त आ जाए, जबकि होशियार होना किसी के कुछ काम न आएगा।

हदीस के मुताबिक़, इंसान के लिए तौबा (repentance) का मौक़ा उस वक़्त तक है, जब तक सूरज मशरिक़ से तुलू हो रहा है। जब सूरज मग़रिब से तुलू होगा तो इंसान के लिए तौबा का मौक़ा ख़त्म हो जाएगा। (सुनन इब्न-ए-माजह, हदीस नं० 4070)

अल्लाह रब्ब-उल-आलमीन का हालत-ए-ग़ैब में होना इम्तिहान की मस्लहत की बिना पर है। सूरज का मग़रिब से निकलना गोया ख़ुदा के सामने आने के प्रोसेस का आग़ाज़ होगा और क़यामत इस प्रोसेस का ख़ात्मा। यही वह दिन होगा, जबकि ख़ुदा ग़ैब से निकलकर ज़ाहिर हो जाएगा और हर एक को उसके अच्छे और बुरे अमल के एतेबार से अच्छा या बुरा बदला देगा।

लेकिन तौबा का मौक़ा अभी ख़त्म नहीं हुआ है, वह अब भी इंसान के पास मौजूद है। वह जल्द-से-जल्द अपने आपको एक सच्चा इंसान बनाए और ख़ुदा के मंसूबा-ए-तख़्लीक़ (Creation Plan) को जानकर उसके मुताबिक़ ज़िंदगी का सफ़र शुरू करे।

(डॉक्टर फ़रीदा ख़ानम)

पद्म विभूषण अवार्ड

Centre for Peace and Spirituality (CPS International) is greatly thankful to the Government of India for conferring the second highest civilian award, Padma Vibhushan 2021 on our founder Maulana Wahiduddin Khan. With great humility we accept the prestigious award in recognition of his lifelong work in the area of Peace and Spirituality.

Dr. Saniyasnain Khan, his son received the award and conveyed his heartfelt thanks on behalf of his entire family and CPS members worldwide. He said that the award has instilled renewed enthusiasm and passion among all the followers of Maulana Sahab and that his

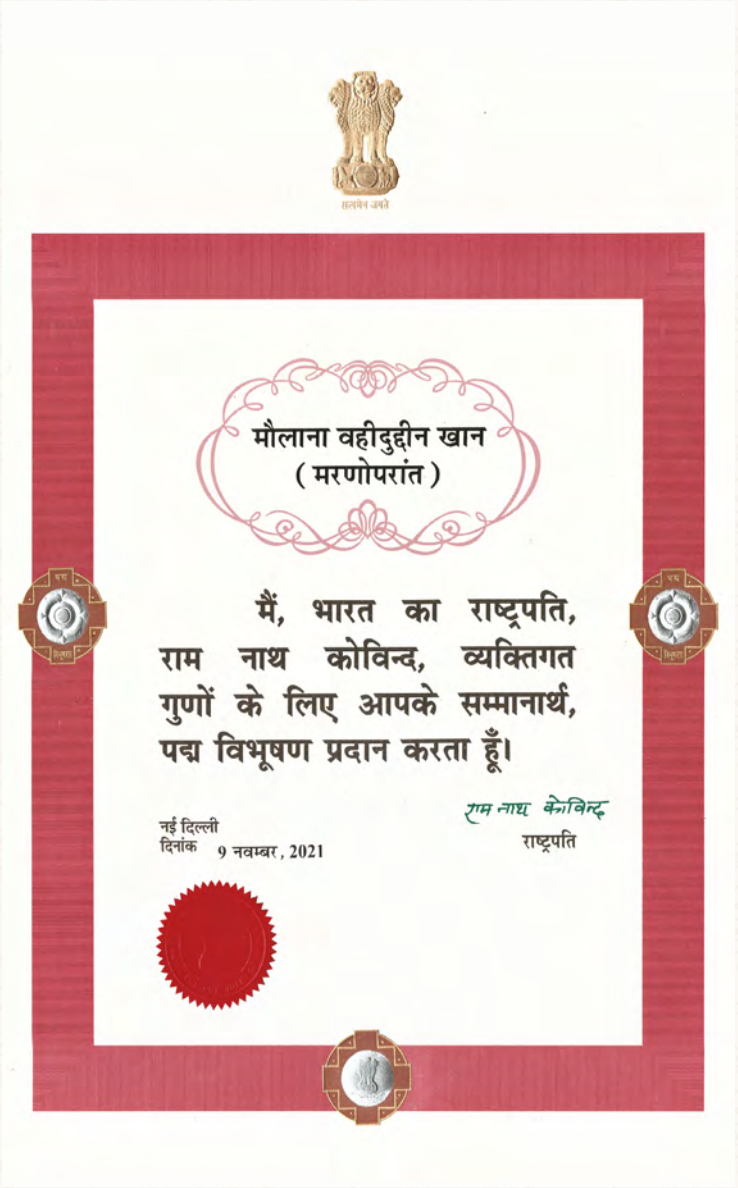

मौलाना वहीदुद्दीन खान
(मरणोपरांत)

मैं, भारत का राष्ट्रपति, राम नाथ कोविन्द, व्यक्तिगत गुणों के लिए आपके सम्मानार्थ, पद्म विभूषण प्रदान करता हूँ।

राम नाथ कोविन्द
राष्ट्रपति

नई दिल्ली
दिनांक 9 नवम्बर, 2021

work towards Global Peace, Spirituality, Interfaith Harmony and Nation Building will continue with greater vigour and teamwork than before.

Further, he added that the dream of Maulana Sahab to see India as a spiritual superpower will be one of the important tasks of the Centre.

सी.पी.एस. इंटरनेशनल अपने बानी मौलाना वहीदुद्दीन ख़ान को हुकूमत-ए-हिंद की जानिब से दूसरा सबसे बड़ा शहरी एज़ाज़ 'पद्म विभूषण-2021' अता करने पर हुकूमत-ए-हिंद का तह-ए-दिल से शुक्रिया अदा करता है। अमन और स्प्रिचुएलिटी के शोबे में मौलाना के ता-हयात काम के एतिराफ़ में दिए गए इस बा-वक़ार अवार्ड को हम इंतिहाई अदब के साथ क़ुबूल करते हैं।

मौलाना वहीदुद्दीन ख़ान के साहबज़ादे डॉक्टर सानीयसनैन ख़ान ने 9 नवंबर, 2021 को सद्र-ए-जमहूरिया-ए-हिंद जनाब रामनाथ कोविंद के हाथों यह अवार्ड हासिल किया और अपने घरवालों और दुनियाभर में मौजूद सी.पी.एस. इंटरनेशनल के मेंबर्स की जानिब से उनका शुक्रिया अदा किया।

इस मौक़े पर डॉक्टर सानीयसनैन ख़ान ने कहा कि इस अवार्ड ने मौलाना वहीदुद्दीन ख़ान के आलमी अमन-ओ-रूहानियत के मिशन और उनके तमाम पैरोकारों में एक नया जोश और जज़्बा पैदा किया है। उन्होंने उम्मीद ज़ाहिर की कि मौलाना के ज़रिये जारीकर्दा इंटरफेथ हारमनी और क़ौमी तामीर का काम पहले से ज़्यादा जोश-ओ-ख़रोश और टीम वर्क के साथ जारी रहेगा। हिंदुस्तान को रुहानी सुपर पावर के तौर पर देखना मौलाना वहीदुद्दीन ख़ान का ख़्वाब था, इस रास्ते में सी.पी.एस. इंटरनेशनल काम करता रहेगा।

RNI No. 50760/90

शांति और आध्यात्मिकता पर और किताबें।

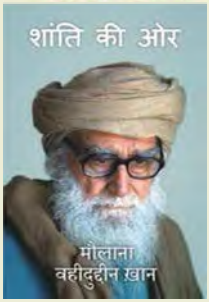

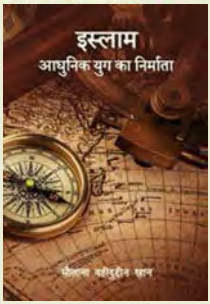

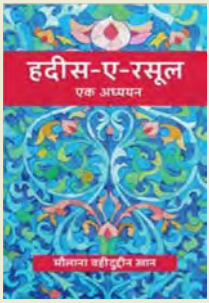

आध्यात्मिक सेट

₹30/-

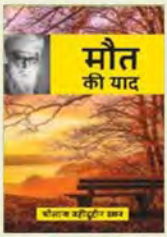

₹40/-

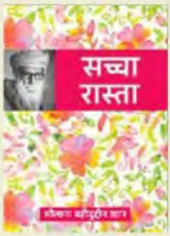

₹20/-

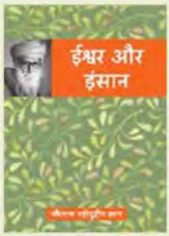

₹40/-

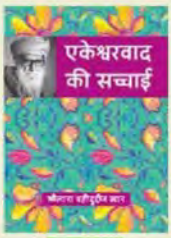

₹30/-

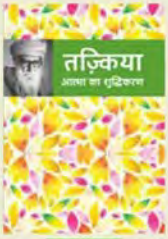

₹45/-

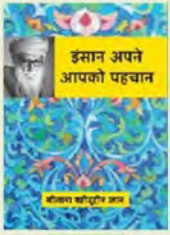

₹20/-

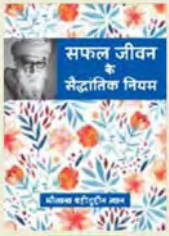

₹40/-